चुनौती
अन्तरीय अन्तरिक्ष की

दर्शन सिंह

लेखक का परिचय

संत दर्शन सिंह जी महाराज, 1921 में, पश्चिमी पंजाब के ज़िला रावलपिंडी के (जो अब पाकिस्तान में है) एक छोटे से गांव, कौन्ट्रिला, में पैदा हुए। अपने गुरूदेव, परम संत श्री हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज (1858-1948) और पिता, हजूरे-पुरनूर संत कृपाल सिंह जी महाराज (1894-1974) की आज्ञा से उनकी जगह पर रूहानियत का काम कर रहे हैं।

संत दर्शन सिंह जी महाराज ने अपने मार्गदर्शक दोनों महापुरूषों के नाम पर 'सावन कृपाल रूहानी मिशन' की स्थापना की। इस संस्था के संस्थापक अध्यक्ष के अतिरिक्त आप छटे विश्व धर्म सम्मेलन और विश्व मानव एकता समाज के अध्यक्ष हैं। आप उर्दू भाषा के सुविख्यात कवि हैं। आपके दूसरे कविता संग्रह "मंजिले-नूर" पर उर्दू अकादमी की ओर से आपको पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत सरकार ने 'हमारा हिंदुस्तान' के नाम से सर्वश्रेष्ठ उर्दू कविताओं का जो संग्रह प्रकाशित किया है, उसमें 'आध्यात्मिक कविताओं' के अंतर्गत सबसे ज्यादा संख्या में आपकी कविताएं दी गयी हैं। अध्यात्म के प्रचार-प्रसार के सिलसिले में दो विश्व यात्राएं कर चुके हैं। दूसरी विश्व यात्रा के दौरान में विभिन्न महानगरों में नगर की चाबियां आपको प्रस्तुत की गयी जो एक बहुत बड़ा सम्मान माना जाता है। कोलंबिया (दक्षिणी अमरीका) में वहां की पार्लियामेंट के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में आपको कोलंबिया राष्ट्र का पदक भेंट किया गया।

संत दर्शन सिंह जी महाराज संत मत (सुरति-शब्द योग) की पुरातन से पुरातन और सनातन से सनातन शिक्षा को आज के युग और जमाने में ताजा कर रहे हैं। उनकी तालीम Positive Mysticism अर्थात् रचनात्मक या सकारात्मक अध्यात्म की है जो दुनियां में रहते हुए, घर-बार, समाज, देश तथा विश्व के प्रति अपने कर्त्तव्य एवं दायित्व पूरे करते हुए मानव जीवन के परम् लक्ष्य की प्राप्ति अर्थात् अपने आपको, अपने आत्म स्वरूप को जानने और परमात्मा को पाने का रास्ता है। वो स्वयं भारत सरकार में डिप्टी सेक्रेटरी के उच्च पद से रिटायर हुए हैं और पेंशन पर गुजारा करते हुए परमार्थभिलाषियों की मुफ्त सेवा करते हैं। कृपाल आश्रम, (नं. 2, कनाल रोड, विजय नगर, दिल्ली-9) में, जो सावन-कृपाल रूहानी मिशन का हैडक्वार्टर या केंद्र है, अपने निवास स्थान में वो हर वक्त परमार्थभिलाषियों की सेवा में व्यस्त रहते हैं। यहां (कृपाल आश्रम में) सप्ताह में दो बार, इतवार की सुबह और मंगलवार की शाम को नियमित रूप से सत्संग होता है।

आवरण चित्र–गतिमान तारामंडल (अमरीकन सेंटर, लायब्रेरी, नई दिल्ली के सौजन्य से)

चुनौती अन्तरीय अन्तरिक्ष की

चुनौती

अन्तरीय अन्तरिक्ष की

दर्शनसिंह

सावन-कृपाल पब्लिकेशन्स स्पिरिचुअल सोसायटी (पंजीकृत) कृपाल आश्रम
विजय नगर, दिल्ली-११०००९

हिन्दी संस्करण
पहली बार : फर्वरी १९८५
संख्या : ३०००

कम्पोजिंग एवं डिज़ाईन : हरि प्रिन्टर्स, विजय नगर, दिल्ली-११०००९
मुद्रक : सैन्ट्रल इलैक्ट्रिक प्रेस, कमला नगर, दिल्ली-११०००७

भूमिका

सन्त महात्मा जो हमारे मार्ग दर्शन के लिए इस धरा पर आते हैं, एक ऐसी सच्चाई का परिचय हमें देते हैं, जो सदा एक-रस (परिवर्तन रहित) है। सन्तों की शिक्षा भी शाश्वत है, वो सदा से चली आ रही है, सदा रहेगी। वो सनातन से सनातन और पुरातन तालीम सन्तों की, समस्त मानव जाति के लिए है, हर ज़माने और हर इन्सान के लिए है। सत्य और उसके सन्देशवाहक सत्स्वरूप महापुरुषों की तालीम तो सदा एक-रस, नित्य और स्थिर है, लेकिन समय की ये स्थिति नहीं : वो परिवर्तनशील हैं, बदलता रहता है। समय के साथ इन्सान भी बदलता रहता है—उसका रहन-सहन, उसका सोचने का ढंग, उसकी पसन्द-नापसन्द, हर चीज़ बदल जाती है। सत्य की तालीम को लोगों तक पहुंचाने, उनके दिल-दिमाग में उतारने का ढंग, समय के साथ साथ बदलता रहता है। हरेक महापुरुष उस पुरातन से पुरातन और सनातन सत्य को अपने ज़माने की प्रचलित भाषा में जन-जीवन, जन-मानस और जन-रुचि के अनुरूप अपने ढंग से प्रस्तुत करता है, जिस से उसकी बात न सिर्फ लोगों को समझ आए वरन जन-जन के दिल में उतर जाए।

हमारी इस बीसवीं शताब्दी के शुरू में, जब इन्सान ने साइन्स के नाम पर आध्यात्मिक जीवन की अवहेलना करना शुरू कर दिया था, परम सन्त श्री हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज (१८५८-१९४८ ई०) और हजूरे-पुरनूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज (१८९४-१९७४ ई०) ने विज्ञान के इस युग और ज़माने में अध्यात्म के प्राचीन सन्देश को एक सुनिश्चित, प्रयोग-सिद्ध विज्ञान, के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया तथा सिद्ध और प्रमाणित किया कि अध्यात्म विद्या एक सर्वांग-संपूर्ण, सुनिश्चित, प्रयोग-सिद्ध विज्ञान है। वो विद्याओं की विद्या है, सारी प्रचलित विज्ञान पद्धतियां एवं विद्याएं उसी से निकली हैं।

तब से (हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज और सन्त कृपालसिंह जी

महाराज के बाद) ज़माना बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ा है। हमने साइन्स और तकनीकी के क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रगति की है और अपनी महान उपलब्धियों से दुनिया का नक्शा बदल के रख दिया है, जिसके फल स्वरूप हमारा सोचने का ढंग, हमारे मापदंड, हमारी भाषा, सभी कुछ बदल के रह गया है। पिछले साल सन्त दर्शनसिंह जी महाराज दूसरी बार पश्चिम यात्रा पर गए—जिस में योरुप और उत्तरी एवं दक्षिणी अमरीका का दौरा शामिल था—तो ये चीज़ बहुत साफ़-स्पष्ट रूप में सामने आई। जहां भी वो गए, एक नयी जागृति की लहर उन्होंने देखी। पश्चिम के प्रगतिशील एवं समृद्ध देशों में लोग जीवन के रहस्य, उसकी सार्थकता, के बारे में जानना चाहते थे। ६ जून से १३ सितंबर १९८३ तक तीन महीने और चार दिन की इस यात्रा के दौरान में सार्वजनिक सभाओं में भाषणों, रेडियो, टी० वी०, प्रेस (समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं) आदि जन-संचार साधनों द्वारा प्रसारित एवं प्रकाशित प्रश्नोत्तर गोष्ठियों, भेंट वार्ताओं-विशेष लेखों में, विविध विषयों पर उन्होंने खुल कर बात की। उनके श्रोताओं और मुलाकातियों में उदारवादी, प्रगतिशील, बुद्धिजीवी, श्रमजीवी, राजनीतिक एवं सामाजिक नेतागण, पारलियामेंन्ट के मेम्बर, विभिन्न देशों के दूतावासों के प्रतिनिधि, वैज्ञानिक, पत्रकार आदि, जीवन के विविध क्षेत्रों, समाजों तथा वर्गों के लोग शामिल थे। सभी लोग अपनी अपनी समस्यायें और सवाल लेकर उनके पास आए। सारे सवालों की तह में एक ही सवाल था उनका – ये जीवन क्या है ? इसकी सार्थकता क्या है ? वियाना (आस्ट्रिया) पेरिस (फ्रांस) लण्डन (इंगलेंड) न्यू यार्क, शिकागो (उत्तरी अमरीका) जहां भी वो गए, हर सभा और समागम में उन्होंने सन्त मत की पुरातन शिक्षा को आधुनिक युग की वैज्ञानिक उपलब्धियों के नवीनतम संदर्भों एवं पारिभाषिक शब्दावली में प्रस्तुत किया, जिस का उत्कृष्ट नमूना उनका बहुचर्चित प्रवचन "The Challenge of Inner Space" (अन्तरीय अन्तरिक्ष की चुनौती) इस पुस्तिका में प्रस्तुत है। ये महत्वपूर्ण प्रवचन उन्होंने हर शहर में और हर सभा, समागम और गोष्ठी में दुहराया।

बाह्य अन्तरिक्ष यात्रा को शुरू हुए तीन दशक से अधिक समय नहीं हुआ जब कि अन्तरीय गगन की यात्रा अनादि काल से चली आ रही है। सन्त दर्शन सिंहजी ने वहां (पश्चिम यात्रा में जहां भी वो गए) श्रोताओं को स्मरण दिलाया कि असाधारण प्रतिभावान चन्द लोग वर्षों की सिखलाई और अभ्यास के बाद अन्तरिक्ष यान को चलाने की क्षमता प्राप्त करते हैं। अन्तरिक्ष में उड़ने वाले

एक एक यात्री के पीछे धरती पर एक विराट निर्देशन तन्त्र होता है, जिसमें हज़ारों वैज्ञानिक तथा शिल्पी काम करते हैं। बाह्य अन्तरिक्ष यात्रा एक विराट योजनाबद्ध अभियान है, जिसके लिए साधन जुटाना Super Powers (अति शक्तिशाली एवं समृद्ध राष्ट्रों) ही का काम है। उसके मुकाबिले में अन्तरीय अन्तरिक्ष या गगन की यात्रा प्रभु की देन है, जो अन्य दूसरी प्रभु की दातों (वरदानों) की तरह मुफ्त मिलती है। समर्थ आत्मानुभवी महापुरुष का मार्ग-दर्शन प्राप्त हो तो एक बच्चा भी कल्पनातीत गति से अन्तर दिव्य मण्डलों की चढ़ाई कर सकता है।

सन्त महात्मा अनादि काल से अन्तरीय अन्तरिक्ष की यात्रा का आह्वान मानव जाति को देते चले आ रहे हैं। सन्त दर्शनसिंह जी ने अपने प्रवचन, "अन्तरीय अन्तरिक्ष की चुनौती" में आज के युग के संदर्भ और भाषा में वही आह्वान हमें दिया है। कोलंबिया राष्ट्र की कांग्रेस (संसद) के प्रधान, डाक्टर हाल्गविन सारदी के शब्दों में, 'प्रभु करे कि उनका डाला हुआ बीज समय पाकर फलीभूत हो और हमारे जीवन को समृद्ध बनाए।"

●

प्रस्तुत प्रवचन के बारे में चन्द शब्द

इस पुस्तिका में हम हिन्दी भाषा-भाषी पाठकों के लाभार्थ हजूर सन्त दर्शनसिंह जी महाराज के बहुचर्चित प्रवचन, The Challenge of Inner Space का हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत कर रहे हैं। ये प्रवचन हजूर महाराज जी की द्वितीय पश्चिम यात्रा (९ जून से १३ सितम्बर १९८३ तक) की महान उपलब्धि है। इसमें उन्होंने अध्यात्म का शाश्वत सन्देश आधुनिक मानव के दिल-दिमाग में उतारने के लिए, जो विज्ञान की नवीनतम उपलब्धियों की बदौलत इस धरा के गुरुत्वाकर्षण का घेरा तोड़कर भूमण्डलीय से अन्तर्मण्डलीय मानव बन चुका है, नयी शैली और नये सन्दर्भों से काम लिया है। वास्तव में ये प्रवचन अध्यात्म के प्रचार-प्रसार-विश्लेषण-व्याख्या की परम्परा में एक water-shed या जल-विभाजक के समान है, जहां से पुरानी लोक को सीमा का अन्त और नयी प्रचार प्रणाली की शुरूआत होती है।

श्री हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज (१८५८-१९४८) पहले महापुरुष थे जिन्होंने साइन्स के इस युग में जन-मानस तथा जन-रुचि के अनुरूप अध्यात्म के सनातन सन्देश को एक प्रयोग-सिद्ध साइन्स के रूप में पेश किया। उनके आध्यात्मिक उत्तराधिकारी, हजूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज ने अध्यात्म के प्रचार-प्रसार के सिलसिले को और आगे बढ़ाया और आज तक आए महापुरुषों की वाणियों और धर्मग्रन्थों के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर सिद्ध और प्रमाणित किया कि सभी धर्मों और मज़हबों की मूलभूत शिक्षा एक है।

हजूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज के समय में बाह्य अन्तरिक्ष की खोज-यात्रा अभी शुरू ही हुई थी, उसके व्यापक परिणाम पूरी तरह सामने नहीं आए थे। उनके प्रचार और प्रयत्नों का लक्ष्य यही रहा कि एटम युद्ध की सर्वनाशकारी संभावना को कैसे टाला जाए। संत दर्शनसिंह जी महाराज ने

जब रूहानियत के प्रचार-प्रसार का काम शुरू किया तो विज्ञान की नवीनतम उपलब्धियों, विशेष रूप से अन्तरिक्ष की खोज यात्राओं के फलस्वरूप इन्सान और उसका माहौल बड़ी तेजी से बदला और बदलता चला जा रहा है। विद्युत गति युग-परिवर्तन के दौर में संत दर्शनसिंह जी महाराज ने काम शुरू किया, जिसकी झांकियां वो वर्षों पहले अपनी कविताओं में प्रस्तुत कर चुके थे, जैसे बाह्य अन्तरिक्ष की उड़ान के बारे में दो दशक पहले कहे हुए उनके ये शेअर :

जुस्तजू चांद-सितारों की तो जारी है मगर।
आह इन्सां को कहां है दिले इन्सां की खबर।।

अन्तरिक्ष उड़ान के इस दौर के इन्सान की tragedy (त्रासदी) की पूरी तस्वीर खेंच के रख दी है, कि इन्सान चांद तक तो पहुंच गया मगर अपने पड़ौसी के दिल तक नहीं पहुंच सका। और इसी संदर्भ में कहा गया ये शेअर :

वुसअते कायनात की सैर का माहसल तो है।
तेरे ही दर पे आएगा कल ये थका हुआ बशर।।

अन्तरिक्ष की उड़ान हो या जंगलों-पहाड़ों-बयाबानों की खोज-यात्रा, परमात्मा की बनाई अनन्त सृष्टि में इन्सान की ये दौड़-धूप कहो या सैर, निष्फल नहीं रहेगी। थका-हारा इन्सान आखिर तेरी ही शरण में आएगा हे प्रभु ! बाहर नश्वर जगत में न जीवन है न जीवनाधार, जीवन का अनन्त स्रोत आत्मा, और जीवनाधार परमात्मा, हमारे अन्तर में है—यही वो अमर सन्देश है सन्तों का, जो सन्त दर्शनसिंह जी महाराज के प्रवचन, "चुनौती अन्तरीय अन्तरिक्ष की" में बड़ी स्पष्टता, सहजता और सरसता से उभरा है।

१९७८ ई० के मध्य में जब वो अपनी पहली पश्चिम यात्रा पर गए तो उन्होंने अध्यात्म के विविध पक्षों पर सारगर्भित प्रवचनों का एक संग्रह तैयार किया था। वह सूट केस जिसमें ये प्रवचन रखे थे, यात्रा के दौरान रस्ते ही में खो गया। उन्होंने अपने मार्गदर्शक दोनों महापुरुषों का ध्यान कर, जो चीज़ सामने आई, उसी को आधार बनाकर बोलना शुरू कर दिया। एक जगह होटल में टाक थी। रस्ते में में कुछ बाराती पी कर हो-हल्ला कर रहे थे। उनको देख उन्हें "अमर सुहाग" का मज़मून सूझ गया। एक बार कार में प्रवचन के लिए निश्चित स्थान पर जा रहे थे। हमारे यहां भारत में Left hand drive का अर्थात् कार को बायीं ओर मोड़ने का नियम है। अमरीका में दायीं ओर मुड़ने का नियम लागू है और जगह जगह आदेश पट्ट लगे हुए

हैं, keep to the right, जिसका शब्दार्थ है, 'सीधे रस्ते चलो'—और इस बात को लेकर हजूर महाराज ने Ethical life अर्थात् नेक-पाक-सदाचारी जीवन पर ऐसा प्रभावशाली प्रवचन किया जो मुद्दतों लोगों के दिल-दिमाग में गूंजता रहा।

सन्त दर्शनसिंह जी महाराज की दूसरी पश्चिम यात्रा (९ जून से १३ सितम्बर) से सवा साल पहले २४ फर्वरी १९८२ को एक महत्वपूर्ण घटना घटी जिसका जिक्र प्रस्तुत प्रवचन के सन्दर्भ में जरूरी मालूम होता हैं, जब अमरीका की वैज्ञानिक संस्था Foundation of Mind Research(मानसिक अनुसन्धान संस्थान) के वैज्ञानिकों की टोली महाराज जी से मिलने कृपाल आश्रम दिल्ली आई। इस टोली की निदेशिका डाक्टर हूस्टन ने बताया कि उन्हें और उनके साथी वैज्ञानिकों को चांद से लौटने वाले अन्तरिक्ष यात्रियों की मनःस्थिति के अनुसंधान का कार्य सौंपा गया था। चांद पर पहुंचने वाले अन्तरिक्ष यात्रियों ने बताया कि जाते समय वो इन्जीनियर, डाक्टर, यन्त्र-शिल्पी या वैज्ञानिक थे, लेकिन वहां से आते समय उनमें से हरेक रहस्यवादी और प्रभु भक्त बन चुका था। डाक्कर हूस्टन ने एक दिलचस्प बात कही कि मां की कोख से बाहर आकर ही बच्चे को मां की पहचान होती है। विश्व के इतिहास में पहली बार इन्सान ने इस धरा के गुरुत्वाकर्षण से आज़ाद होकर एक साथी और सहोदर के रूप में उसे पहचाना, और उसी क्षण भूमण्डल निवासी इन्सान में अन्तर्मण्डलीय चेतनता का संचार हुआ। डाक्टर हूस्टन ने कहा कि आज सबसे महत्वपूर्ण सवाल जगत और उसकी समस्याओं का नहीं, इन्सान और उसके अपने आपे का है कि वो कौन है, क्या है ?

विश्व के सुविख्यात वैज्ञानिकों से विचार विमर्श के बाद दूसरी घटना पश्चिम यात्रा के दौरान रेडियो में एक महिला अन्तरिक्ष यात्री की उड़ान के बारे में प्रसारित समाचार था, जिसका ज़िक्र महाराज जी ने इस प्रवचन में किया है। आज मानव बाह्य अन्तरिक्ष की चुनौती को स्वीकार करने के लिए ज्यादा तैयार है, जिसका आह्वान सन्त-महात्मा अनादि काल से देते चले आ रहे हैं और जिसे सन्त दर्शनसिंह जी ने आज के युग और ज़माने में विज्ञान और तकनीकी के सन्दर्भों में बड़ी खूबसूरती से दोहराया है और इस प्रवचन का दुनियां के कौने-कोने में जो स्वागत हुआ है वो इस बात की पुष्टि करता है।

हरिचन्द्र चड्ढा
सम्पादक सतसन्देश

चुनौती
अन्तरीय अन्तरिक्ष (गगन) की

पारसाल दूसरा पश्चिम यात्रा के दौरान हवाई जहाज पर लन्दन से न्यू यार्क जाते हुए, एक मज़मून मैंने पढ़ा, जिस में सातवों अन्त-रिक्ष यात्रा की चर्चा की गयी थी, जिस के यात्रियों में (अन्तरिक्ष यात्रा के इतिहास में पहली वार) एक अमरीकी महिला भी शामिल थी। उस समय जब कि मैं 'New World' अर्थात 'नई दुनिया' (ये शब्द उत्तरी एवं दक्षिणी अमरीका के लिए प्रयोग किया जाता है, शायद इस लिए कि ये महाद्वीप कोलंवस की नयी खोज थे, उस से पहले दुनिया के किसी नक्शे पर इनका कोई नाम-निशान नहीं था) की भूमि पर कदम रखने जा रहा था, ठीक उस मौके पर पश्चिम का नवीनतम खोज तथा विज्ञान के क्षेत्र में वहां के प्रगतिशील देशों की अनुपम उपलब्धियों के बारे में ये मजमून एक याददिहानी के रूप में मेरे सामने आया, और ये बात मुझे वहुत महत्वपूर्ण लगी, कुछ इस लिए भी कि कई साल पहले जवकि प्रथम अन्तरिक्ष यान, 'स्पुतनिक' ने अन्तरिक्ष के Orbit, अर्थात परिक्रमा-पथ, का चक्कर काटना शुरू किया और उसके वाद जब इन्सान ने पहली वार चांद पर कदम रखा उस वक्त से वाह्य अन्तरिक्ष मानव की कल्पना का केन्द्र वन गया है। हर साल इस क्षेत्र (अन्तरिक्ष की खोज एवं यात्रा के क्षेत्र) में नयी-नयी उपलब्धियों की खवरें मिल रही हैं, और अन्तरिक्ष की खोज-यात्रा की नयी-नयी संभावनाएं और रास्ते हमारे सामने खुलते चले जा रहे हैं। अमरीकी और रूसी अन्तरिक्ष यात्री सचमुच हमारे ज़माने के hero अर्थात शूरवीर कहे जा सकते हैं।

इस विलक्षण प्रगति के वावजूद इन्सान आज कहां खड़ा है? उसके

जीवन में क्या परिवर्तन हुआ है ? वो तरक्की की मंज़िलें तय करते हुए चाँद तक तो पहुंच गया लेकिन वो अपने पड़ौसी के दिल तक नहीं पहुंच सका। मेरा एक शेअर है :

जुस्तजू चाँद-सितारों की तो जारी है मगर।
आह इन्सां को कहाँ है दिले इन्सां की खबर॥

इसी संदर्भ में मेरा एक और शेअर हैं :

वो क्या निखारेंगे मेहरो-मह को, वो क्या संवारेंगे कहकशां को।
चले हैं जो आस्माँ को जानिब ज़मीं की लेकिन खबर नहीं है॥

वास्तव में मानव आज सर्वनाश के कगार पर खड़ा है। एक गलत कदम उठा नहीं कि हमारा ये भव्य-सौम्य भूमण्डल, अपनी असंख्य विविध आकार जीव-सृष्टि समेत नष्ट हो जाएगा। अगर हम सर्वनाश से बचना और हमेशा के सुख, हमेशा की शान्ति, को पाना चाहते हैं, तो एक ही रास्ता है, कि हम अपने "अन्तर के अन्तरिक्ष" की चुनौती को स्वीकार करें। ये मानव शरीर, जो हमें मिला है, ये ब्रह्माण्ड के नमूने पर बनाया गया है, इसमें खण्ड-मण्डल-आकाश-पाताल सभी कुछ है, संपूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना इस शरीर में मौजूद है, जिसे हमने खोजना और पाना है। "जो ब्रह्मण्डे सो ही पिण्डे जो खोजे सो पावे।" यह चुनौती है Inner Space अर्थात हमारे सबके अन्तर में जो विराट अन्तरिक्ष है (जिसका हमें इस वक्त कुछ पता नहीं) उसको खोजने और पाने की। हर इन्सान को, अनन्त काल से चली आ रही इस चुनौती का सामना करना है, अर्थात अपने अन्तर के अन्तरिक्ष को खोजना और पाना है। उसके लिए हमें देहाभास से, इस स्थूल शरीर से, ऊपर उठना होगा, तन-मन के इस पिंजरे से निकलकर गगन-मण्डल में (बाहर के गगन-मण्डल में नहीं हमारे अपने अन्तर में जो गगन-मण्डल या अन्तरिक्ष है, उसमें) चढ़ाई करना है। कैसे हम इस जिस्म से, इस स्थूल शरीर से, ऊपर आ सकते हैं ? किसी अनुभवी महापुरुष के चरणों में बैठ कर इस कला को सीखना होगा। ये काम इसी जीवन में, इसी मानव शरीर में, हम कर सकते हैं, और किसी योनि में नहीं, इसी लिए मनुष्य जीवन को अशरफ़-अल-मखलूक़ात या सर्वश्रेष्ठ योनी कहा गया है, नर-नारायणी देह (क्योंकि इस नर-देही में हम नारायण अर्थात प्रभु को पा सकते हैं) कहा गया है,

Roof and Crown of Creation अर्थात सबकी सरताज योनी कहा गया है। बाह्य अन्तरिक्ष की उड़ान के लिए एक Launching Pad या अड्डा होता है, जहां से अन्तरिक्ष यान गगन-मण्डल में छोड़ा जाता है। अन्तर के अन्तरिक्ष में चढ़ाई करने के लिए ये शरीर हमारा Launching Pad का काम देता है, जहां से हम चढ़ाई शुरू कर सकते हैं। जैसे बाहर की उड़ान में Launching Pad मात्र एक आधार का, base का, काम देता है, और जब यान ऊपर उठता है तो वो नीचे छूट जाता है, इसी तरह अन्तर की चढ़ाई इस शरीर से, तन-मन के इस पिंजरे से, ऊपर आकर शुरू की जा सकती है।

तो ये मानव तन हमारा Launching Pad है, अन्तरीय अन्तरिक्ष की यात्रा के लिए, और वो घट-घट व्यापी करन-कारण प्रभु-सत्ता, जिसे आज तक आए सत्स्वरूप महापुरुषों की लिखतों-वाणियों और धर्मग्रन्थों में नाद, शब्द, उदगीत, कलमा, कलामे-रब्बानी, Word, सराओशा आदि नामों से बयान किया गया हैं, अन्तरिक्ष यान है जिस पर सवार होकर अन्तर के गगन-मण्डल में चढ़ाई हम कर सकते हैं। (हम यहां आत्मा के लिए प्रयोग किया गया है, जो हमारा अपना आपा है : शरीर मात्र किराए का मकान है, जिसमें हम अर्थात आत्म देहधारी निवास करते हैं)।

जैसे बाह्य अन्तरिक्ष को निर्धारित पथ पर चलाने, अन्तरिक्ष में अपने Orbit, परिक्रमा-पथ पर उसका दिशा-निर्देशन करने, तथा संकट से बचाने के लिए एक Pilot अर्थात चालक, और उसके साथ विविध यन्त्रों का एक Guidance System अर्थात यान के मार्गदर्शन तथा निर्देशन के लिए पूरा एक तन्त्र होता है, जो लाखों मील दूर उड़ रहे अन्तरिक्ष यान को आदेश देता और उस पर अंकुश रखता है, यहां, अन्तर के गगन मण्डल में, चढ़ाई के लिए, सतगुरू हमारे मार्गदर्शक, चालक, एवं Guidance System अर्थात निर्देशन तन्त्र, का काम करते हैं। उनका सारा काम तवज्जो से, सुरत की धारा से, होता है। वहाँ दूरी-नजदीकी का कोई सवाल नहीं। कबीर साहब के शब्दों में, "गुरू कहीं बैठा हो, शिष्य सात समुन्दर पार कहीं और बैठा हो, वहीं से, "दीनी सुरत पठाय" तवज्जो की, सुरत की धारा (जो गुरू भेजता है) शिष्य की आत्मा को उभार देकर इस धरा से उठाकर दिव्य

मण्डलों पर ले जाती है।" बाह्य अन्तरिक्ष की तरह अन्तरीय गगन मण्डल की उड़ान का सारा काम remote control से, दूर-मार निर्देशन से, होता है। बाहर का अन्तरिक्ष यान एक खास किस्म के ईन्धन (पेट्रोल) से चलता है, इसी प्रकार अन्तर के गगन मण्डल की उड़ान के लिए भी खास किस्म का पेट्रोल दरकार है और वो पेट्रोल है, प्रेम। दशम पादशाह, श्री गुरू गोबिन्दसिंह जी महाराज के शब्दों में :

साचि कहौं सुनि लेहो सबै,
जिन प्रेम कियो तिनही प्रभु पायो ।।

ये चार चीजें उपलब्ध हों तो कोई वजह नहीं कि हम इसी जीवनकाल में वापस अपने निजघर, प्रभु के धाम, न पहुंच जाएं। ये वो अमर सन्देश है, जो सन्त-महात्मा अनन्त काल से हमें देते चले आ रहे हैं।

सन्त महात्मा और वली-नबी-अवतार, अनन्त काल से ये बात कहते चले आ रहे हैं, कि जैसे बाहर अनन्त सृष्टि का पसारा हम देखते हैं, हमारे इस भू-मण्डल की तरह अनेकों मण्डल हैं यहाँ, इसी तरह अन्तर में खण्ड-मण्डल, आकाश-पाताल हैं। महापुरुषों ने, जो मनुष्य जाति के कल्याण के लिए इस दुनिया में आए, अपने अन्तर में प्रवेश करके अन्तरीय गगन मण्डल में चढ़ाई की और अपने निजानुभव का निचोड़ धर्म-ग्रन्थों में लिख दिया। हरेक समाज में महापुरुष आए हैं, अतः सभी समाजों के धर्म-ग्रन्थों में अन्तर की चढ़ाई का, उन मंज़िलों और मक़ामों का, वर्णन हमें मिलता है, जिन्हें तय कर सुरति या आत्मा अपने अंशी, कुल-मालिक में जाकर लीन हो जाती है, कतरा, चेतनता के समुन्दर (परमात्मा) में लीन होकर समुन्दर हो जाता है, कुल-मालिक से एक हो जाता है। पिछली चन्द शताब्दियों से साइन्स के अविष्कारों तथा उपलब्धियों की चकाचौंध में इन्सान ने, विशेष रूप से पश्चिम वासियों ने, अन्तरीय गगन मण्डल के यथार्थ की उपेक्षा करना, उससे आंखें चुराना, शुरू कर दिया है। ये सब साइन्स के नाम पर हो रहा है, जब कि साईन्स धीरे-धीरे पुरानी सच्चाइयों को नये सिरे से खोज रही है, उनकी सत्यता की पुष्टि कर रही हैं।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में सबसे पहले अनुसन्धान-

कर्ता डाक्टर रेमण्ड मूडी थे, जिनकी पुस्तक 'जीवन के पश्चात् जीवन' ने पश्चिमी चिन्तन एवं विचारधारा को नयी दिशा दी है। उन्होंने अपनी इस किताब में अस्पतालों में मरने वाले वहुत से रोगियों के वयान दर्ज किए हैं जिन्हें डाक्टरी परीक्षण के वाद मुर्दा घोषित किया जा चुका था, लेकिन वो मौत के वाद दोवारा ज़िन्दा हो गए। उन रोगियों ने, मरने, अर्थात शरीर छोड़ने के वाद, जो अनुभव उन्हें हुए, उनके वारे में डाक्टरों को जो कुछ वताया वो सव इस किताब में दिया गया है। मर कर ज़िन्दा होने वाले लोगों की इन गवाहियों के वाद डाक्टरों को पता चला है और उनमें जागृति आने लगी है कि मौत के वाद भी जीवन रहता है, या यूं कह लीजिए कि इस जीवन से पहले भी जीवन था, और जिस्म की मौत के वाद भी जीवन रहता है। एक जागृति उनके दिल-दिमाग में आती जा रही है कि इन्सान के अन्तर में व्यक्तिगत रूप में जो चेतनता है, जिस्म की मौत के साथ वो मरती नहीं। जव तक वो चेतनता जिस्म में रहती है वो जिस्म की होकर रहती है, शरीर के साथ लम्पटताई के कारण अपने को शरीर ही समझने लगती है, लेकिन वो शरीर का अंग नहीं, वो अपना एक अलग अस्तित्व रखती है। वो एक ऐसी चेतनता है, जो आकस्मिक संकट या दुर्घटना की स्थिति में शरीर से अलग होकर आंख और कान की इन्द्रियों के विना देख-सुन सकती है। गुरुवाणी में इस हक़ीक़त (सच्चाई) को वड़े साफ-स्पष्ट शब्दों में इस तरह वयान किया गया है।

अख्खां वाझों वेखना, विन कन्नाँ सुनना ॥
पैराँ वाझों चल्लना विन हत्थां करना ॥

ये इन्द्रियां हमारी सुरत या आत्मा ही से ताकत लेती हैं। आत्मा शरीर से निकल जाए तो वो निश्चेत एवं निष्प्राण हो जाती हैं। आत्मा की वाह्य अभिव्यक्ति का स्वरूप है, तवज्जो या ध्यान। जीवन में कई वार हमें इस वात का प्रमाण मिलता है कि हमारी तवज्जो, हमारा ध्यान, कहीं और लगा हो, तो हम आंखें रखते हुए भी नहीं देखते, कान होते हुए भी नहीं सुनते। ये मूलभूत सत्य, अर्थात अपने आपे का, आत्मा का ज्ञान, अनादि काल से चला आ रहा है। महापुरुषों की वाणियों और लिखतों में, समाज, जो उनकी शिक्षाओं को

ताज़ा रखने के लिए बने, उन के धर्मग्रन्थों में, इस गूढ़ एवं गुप्त ज्ञान (आत्म ज्ञान) का सुविस्तार वर्णन हमें मिलता है। ये पुरातन से पुरातन और सनातन से सनातन विद्या (परविद्या या आत्मविद्या) सदा से चली आ रही है, सदा रहेगी। ये न बदली है न बदलेगी। इस के अनुसार इन्सान शरीर रखता है, लेकिन वो शरीर नहीं है। वो आत्मा है शरीर का निवासी, इसको चलाने वाला। वो अजर-अमर-अविनाशी है। शरीर की मौत के बाद भी वो रहता है। ये सारा ज्ञान जो गुह्यधर्म के परंपरागत रूप में हमें (हम किसी भी धर्म-समाज से संबंध रखते हों) आज उपलब्ध है, उसको अनुभव भी किया जा सकता है। हम जीते-जी इस पंच-भौतिक शरीर से ऊपर उठ कर अपने यथार्थ आत्मस्वरूप, को देख सकते हैं, आत्मा का साक्षात्कार कर सकते हैं, इस स्थूल जगत से ऊपर दिव्य मण्डलों में चढ़ाई कर सकते हैं। बाह्य अन्तरिक्ष की यात्रा आधुनिक विज्ञान के लिए एक नयी चीज़ हो सकती है, लेकिन अन्तरीय गगन मण्डल की यात्रा अनादि काल से सन्त मत की शिक्षा का अनिवार्य अंग है।

अन्तरिक्ष यात्रा का मूलाधार : मानव शरीर

अगर हम अन्तर के गगन मण्डल के चमत्कारों की खोज करना चाहते हैं, तो हमें स्वयं अपने घट में (अन्तर में) प्रवेश करके अन्तरीय अन्तरिक्ष में चढ़ाई करनी होगी। ये हमारा मानव शरीर अन्तरीय मण्डलों की उड़ान का base या अड्डा है, जहाँ से हम अन्तरीय दिव्य मण्डलों में चढ़ाई कर सकते हैं। महापुरुष, जो आज दिन तक दुनिया में आए, और धर्मग्रन्थ, जो आज दिन तक लिखे गए, यही कहते चले आ रहे हैं कि मानव जीवन ही में हम परमात्मा को पा सकते हैं, अन्य किसी योनी में नहीं। इसी लिए मानव जीवन को सर्वोत्तम जीवन माना गया है। मानव शरीर हरिमन्दिर है, जिसे परमात्मा ने खुद अपने हाथों से बनाया है। परमात्मा इन्सानी हाथों से बने ईंट-पत्थर-चूने से निर्मित हरिमन्दिरों में नहीं रहता, वो उस हरिमन्दिर (मानव तन) में रहता है, जिसे उसने खुद अपने हाथों से बनाया है। सारे महापुरुष और धर्मग्रंथ कहते हैं कि मनुष्य योनी ८४ लाख जीया-जून की सरदार योनी है क्योंकि इसी में हमारी आत्मा का परमात्मा से मिलाप हो सकता है। मुसलमानों में इन्सान को अशरफ़-अलमखलू-

क़ात (सर्वश्रेष्ठ योनि) कहा है। हिन्दु इस मानव शरीर को नर-नारायणी देह कहते हैं, क्योंकि इसी में नर-नारायण का, आत्मा परमात्मा का, मिलाप हो सकता है। ईसाइयों के धर्मग्रंथों में आता है कि परमात्मा ने इन्सान को अपने नमूने पर, अर्थात अपना रूप बनाया है। और जब प्रभु ने इन्सान की रचना की तो फ़रिश्तों (देवताओं) को हुक्म दिया कि वो इंसान को सिजदा करें (उसे मत्था टेकें) क्योंकि फ़रिश्ते भी अगर परमात्मा को मिलना चाहें तो उन्हें इंसानी शरीर धारण करना पड़ेगा, क्योंकि मनुष्य जीवन ही में आत्मा और परमात्मा का मिलाप हो सकता है।

तो जैसा पहले जिक्र आया, ये मानव शरीर हमारा एक Launching Pad, एक आधार या अड्डा है, जहां से हमारी आत्मा अन्तरीय गगन मण्डल में चढ़ाई कर सकती है। उसके लिए हमें अपनी तवज्जो को बाहर से हटाकर अन्तर्मुख करना होगा। तवज्जो या ख्याल (ध्यान) सुरत या आत्मा का गुण है। इस वक्त हमारी तवज्जो जिस्म का रूप बनी हुई है और इन्द्रियों द्वारा बाहर दुनिया में फैल रही है। हमारे इस शरीर में नौ सुराख या द्वार हैं—दो आँखें, दो कान, दो नासिका, मुंह और नीचे के सुराख। हमारी आत्मा इन नौ द्वारों पर इन्द्रियों के भोगों-रसों में लम्पट हो रही है। आंख की इन्द्री इसे सुन्दर दृश्यों की ओर खींच कर ले जाती है तो कान की इन्द्री राग-रंग की ओर। इसी तरह दूसरी इन्द्रियां मन को भोगों-रसों की ओर खींच ले जाती हैं। मन के साथ आत्मा भी बरबस बाहर खिची फिरती है। चाहिए तो ये था कि मन, आत्मा के वश में होता और इन्द्रियां मन के वश में होतीं, लेकिन यहाँ उलटा चरखा चल रहा है। इन्सान आत्मा देहधारी है। मन आत्मा से ताक़त लेता है और आत्मा ही पर सवार है। हमारी आत्मा मन के साथ लगकर इतना उसका रूप बन गयी है कि उसे अपने आपे का भान नहीं रहा, हालत ये बनी पड़ी है कि इन्द्रियाँ मन को खींचे लिए जा रही हैं और मन के साथ हमारी आत्मा भी बे-अख्त्यार खिची फिरती है। इस लिए इन्सान इन्द्रियों के भोगों-रसों और बाहर दुनिया के संबंधों से हट कर अन्तर्मुख नहीं हो पाता और वो बेबसी और लाचारी का जीवन व्यतीत कर रहा है।

इन्सान हर तरह से बेबस और लाचार है। अजीब बात है कि एक तरफ़ तो सृष्टिकर्ता का ये आदेश है कि वो नेक-पाक-सदाचारी जीवन व्यतीत करे, इन्द्रियों के भोगों-रसों में लिप्त न हो, और दूसरी ओर उसने इन्सान के रास्ते पर जगह-जगह प्रलोभनों के जाल बिछा रखे हैं। उर्दू काव्य में मेरे मार्गदर्शक, हज़रत शमीम करहानी साहब ने इस संदर्भ में ये शेअर कहा है :

इधर कहा कि न छूटे सवाब का जादः।
उधर सजा भी दिया रास्ता गुनाहों से॥

कि इधर तो ये आदेश है प्रभु का, कि सवाब का जादः, अर्थात नेकी और सुकृत्य का, पुण्य कर्मों का, रास्ता न छूटने पाए और उधर उस प्रभु ने हमारे रास्ते में जगह-जगह प्रलोभनों के जाल बिछा रखे हैं। सूफ़ी फ़क़ीर ख्वाजा हाफ़िज साहब इस संदर्भ में कहते हैं :

दर मियाने क़ाअरे दरिया तख़्ता-वन्दम करदः ई।
बाज़ मी गोई कि दामन तर मकुन हुश्यार बाश॥

कि मुझे लकड़ी के तख्ते के साथ बांध कर दरिया में डाल दिया गया है, साथ में हुक्म दे दिया है कि खबरदार! कपड़े न गीले होने पाएं। इंसान करे तो क्या करे? ऐसी बेबसी की हालत में इंसान के दुखी दिल से, उसकी आत्मा की गहराइयों से, दर्द भरी पुकार उठती है कि "हे प्रभु! हमारी रक्षा कर, जैसे भी बने, हमें बचा। हमारे बस की बात नहीं रही।" दशम पादशाह, श्री गुरू गोविन्दसिंह जी महाराज कहते हैं कि दुखी दिलों की दर्द-भरी पुकार वो प्रभु ज़रूर सुनता है। कीड़ी की पुकार उसे पहले पहुंचती है, हाथी की चिंघाड़ बाद में। इसी संदर्भ में कबीर साहब कहते हैं, "कीरी के पग जो नेवर बाजे सो भी साहब सुनता है।" इस सिलसिले में मेरा एक शेअर है :

सुनेगा, रूह को पर्वाज देके देख ज़रा।
क़रीब है उसे आवाज़ देके देख ज़रा॥

दुखी दिलों की दर्द-भरी पुकार जब उस करुणानिधान प्रभु तक पहुंचती है, तो उच्चतम दिव्य मण्डलों से अपने जीवों के कल्याण के लिए उन्हें बचाने के लिए, इस धरा पर आता है। हमारे जैसा इंसान बनकर, सहजातीयता के नाते, एक मित्र, भाई और मार्गदर्शक के नाते

आकर हमें माया के भ्रमजाल से निकालता है अपने आपे का अहसास हमें दिलाता है, अपनी तवज्जो का उभार देकर फैली हुई हमारी सुरत को वाहर से हटा कर हमें अन्तर्मुख उस करन-कारण प्रभु-सत्ता या नाम से जोड़ता है, जिसकी अभिव्यक्ति के दो स्वरूप हैं, ज्योति और श्रुति, रोशनी और आवाज़, जिन के साथ जुड़ने से आत्मा को वो महारस मिलता है जिसके आगे बाहर के सारे भोग-रस फीके पड़ जाते हैं।

अन्तरिक्ष यान : नाम या शब्द

वाह्य अन्तरिक्ष में उड़ान करने के लिए जैसे अन्तरिक्ष यान दरकार होता है, इसी तरह अन्तरीय अन्तरिक्ष में चढ़ाई करने के लिए भी यान की जरूरत पड़ती है, और वो यान, नाम या शब्द का है, जिसे महापुरुषों ने कलमा, वांगे-आस्मानी, नाद, आकाशवाणी, ताओ, सराओशा, Word आदि नामों से बयान किया है। वाईवल में आता है :

"In the beginning was the Word, and the Word was with God, and the Word was God."

अर्थात, शुरू में वो वर्ड (शब्द या नाद) था, और वो शब्द परमात्मा के साथ था, और वो शब्द ही परमात्मा था।" ये कहा जाता है, कि शुरू में केवल वो परमात्मा था। वो Ocean of All-Consciousness अर्थात महाचेतनता का सागर था। फिर उसे ख्याल आया, 'एको अहम् वहुस्याम' अर्थात मैं एक हूं, अनेक हो जाऊं। ख्याल से हिलोर पैदा हुई और दो सूरतें उस से पैदा हुईं (दो स्वरूप उससे वने) प्रभु की ज्योति और श्रुति या नाद, Harmony of Harmonies (समस्वर संगीत या नाद) Unstruck Melody (अर्थात अनहत्त नाद, संगीत जो साज़ से या हाथों की चोट से पैदा न किया जाए)। गुरू नानक साहव कहते हैं, "नामे ही ते सव जग होवा।" कि 'नाम' या 'शब्द' सव का वनाने वाला है, और, "नाम के धारे खण्ड ब्रह्मण्ड" और नाम ही सारी इस रचना को धारण किए हुए है, सव को आधार दे रहा है। तो उस करन-कारण प्रभु-सत्ता की अभिव्यक्ति के दो स्वरूप है, ज्योति और नाद, जो सव सृष्टि में व्याप रहे हैं, इन को मिला कर 'नाम' की संज्ञा दी गयी है, अर्थात नाम में ज्योति भी है, और

नाद भी ।

उस करन-कारण प्रभु-सत्ता के अलग-अलग नाम धर्मग्रन्थों में मिलते हैं। वेदों ने उसे नाद, और उपनिषदों ने उद्गीत (अर्थात उधर का राग) कह कर बयान किया है। बौध धर्मग्रन्थों में उसे Son-orous Light या गुन्जायमान ज्योति और ज़रथुस्थ धर्मानुयायी पार-सियों ने उसे सराओशा की संज्ञा दी है। मुसलमान उसे कलमा कहते हैं, और सूफ़ी फ़क़ीरों ने उसे सौते-सरमदी कह कर बयान किया है। गुरुवाणी में उसे नाम और शब्द की संज्ञा दी गयी है। थियोसोफिकल सोसायटी वाले हमारे भाई उसे Voice of Silence (चुप की आवाज़) के नाम से पुकारते हैं।

वो करन-कारण प्रभु-सत्ता जब परम् धाम से नीचे उतरी तो सब से पहले उसने अन्तरीय मण्डल बनाए और उसके पश्चात दूसरे मण्डल उसने रचे, हमारा ये भू मण्डल बनाया, इन्सान को बनाया और उसके बाद ८४ लाख जीयाजून (जीव सृष्टि) की रचना की। सृष्टि की आदि से प्रभु का ये कानून (नियम तथा विधान) चला आ रहा है, कि जो भी परमात्मा से मिलना चाहता है, वो अपनी सुरत या आत्मा को नाम अर्थात ज्योति और श्रुति के साथ जोड़ दे। जो भी परमात्मा से मिला है, इसी रास्ते से, ज्योति और श्रुति मार्ग से, अपनी सुरत को ज्योति और नाद से जोड़ने के साधन-अभ्यास द्वारा ही मिला है और आगे भी जो मिलेगा उसके लिए यही रास्ता है।

तो अन्तर की यात्रा के लिए हमें नाम या शब्द का यान दरकार है। अब सवाल पैदा हुआ कि ये यान, अर्थात नाम, कहां से मिल सकता है ? भारत में बहुत प्राचीन काल से शब्द की तालीम का एक अटूट सिलसिला चला आ रहा है, जिस में पूर्ण समर्थ सन्त सतगुरू अपने शिष्यों को इसका व्यक्तिगत अनुभव, अर्थात अपनी दयादृष्टि या तव-ज्जो का उभार देकर शिष्य की सुरत या आत्मा को मन-इन्द्रियों से ऊपर लाकर अन्तर्मुख नाम या शब्द से जोड़ते चले आ रहे हैं, और ये सिलसिला आज भी जारी है। भारत अनेकों प्रकार की योग पद्धतियों का जन्मस्थान है। "योग" का शब्द सुनकर आमतौर पर लोगों का ध्यान आसनों तथा क्रियाओं की ओर चला जाता है, जो शरीर को चुस्त-दुरुस्त एवं स्वस्थ रखने के लिए किए जाते हैं। योग, युज धातु

से निकला है, जिस का अर्थ है, जुड़ना या जोड़ना, और इस की सही परिभाषा है, आत्मा को परमात्मा से जोड़ना, जैसा कि कहा है, "योगः आत्माय परमात्माय संयोगः ।" उस का चरम् या मंज़िल है, 'समाधि' स्थिरता या एकात्मता की वो अवस्था जब हम, (उस प्रभु की अंश आत्मा) अपने अंशी परमात्मा से एक, उसमें अभेद, हो जाते हैं ।

गीता में विभिन्न योग-पद्धतियों की चर्चा की गयी है, और पश्चिम के परमार्थाभिलाषी विभिन्न प्रकार की योग-पद्धतियों से भली-भान्ति परिचित हैं । इतने प्रकार की योग-पद्धतियों में किस पद्धति को अपनाया जाए ? साधक उलझन में पड़ जाता है । इस उलझन को हमेशा के लिए दूर करने का श्रेय हमारे सिर के ताज दो प्रभु रूप महापुरुषों, परम सन्त श्री हज़ूर बावा सावनसिंह जी महाराज (१८५८-१९८४ ई०) और हुज़ूरे-पुरनूर श्री सन्त कृपालसिंह जी महाराज (१८९४-१९७४ ई०) को जाता है । उन्होंने इस उलझन को हमेशा के लिए दूर कर दिया है । ये उनकी खास देन है कि रूहानियत, जो कभी भी सिद्ध और प्रमाणित नहीं हो सकती थी, आज एक अनुभूत सत्य तथा प्रयोग-सिद्ध विज्ञान के रूप में हमारे सामने पेश की जा रही है । परमात्मा को पाने का सबसे स्वाभाविक और सरल रास्ता कौन-सा है, इस सवाल का ऐसा सुस्पष्ट एवं सुनिश्चित उत्तर उन्होंने दिया है, कि इस विषय पर कोई संशय बाकी नहीं रहने दिया। उन्होंने बताया और अनुभव रूप में दिखाया, कि सुरत-शब्द योग (जिस में अपनी सुरत या आत्मा को उस करन-कारण प्रभु-सत्ता, नाम या शब्द के साथ, जोड़ा जाता है) आसान से आसान, छोटे से छोटा, कुदरती रास्ता है, प्रभु को पाने का । उन्होंने अध्यात्म को और सुरत-शब्द योग के मार्ग को, आज के वैज्ञानिक युग के जन-मानस के अनुरूप एक सम्पूर्ण, प्रयोग-सिद्ध साइन्स के रूप में प्रस्तुत किया और उसका व्यक्तिगत अनुभव परमार्थाभिलाषियों को प्रदान किया ।

मेरा परम सौभाग्य था कि मुझे इन दो महापुरुषों के चरण-कमलों में बैठने का सुअवसर नसीब हुआ, और आज लोगों को कोई फ़ैज़ (परमार्थ लाभ) मिल रहा है और परमार्थाभिलाषी जनता की कुछ सेवा इन हाथों से हो रही है तो ये उन दो महापुरुषों की दया-मेहर का पुण्य-प्रताप है । उनका रास्ता—सुरत-शब्द योग—सरल से

सरल मार्ग है, जिसे सहज योग भी कहा जाता है, क्योंकि अन्य दूसरी योग-पद्धतियों की तरह उसमें कोई जटिल आसन, क्रियायें तथा साधन नहीं करने पड़ते, इतना आसान रास्ता है कि बच्चा भी उसका अभ्यास कर सकता है और रोग-शय्या पर पड़ा सौ साल का जीर्ण बूढ़ा भी।

सुरत-शब्द योग में सुरत या तवज्जो को (जो सुरत या आत्मा का गुण है) उस करन-कारण प्रभु-सत्ता या नाम से जोड़ना पड़ता है। ये सब से आसान, कुदरती, रास्ता है, अध्यात्म में उन्नति करने का। सुरत का मतलब है, तवज्जो (ध्यान) चेतनता या जागृति, जो हम महसूस करते हैं। Concentration (एकाग्रता) सुरत या आत्मा का मौलिक गुण है। सन्त मत पर चलने वाले साधक अपनी सुरत को शब्द के साथ जोड़ने में प्रयत्नशील रहते हैं। हर चीज अपने मूल, अपने स्रोत, की ओर जाती है। शब्द का उद्‌गम-स्थल, उसका स्रोत, वो परमात्मा है। शब्द के साथ लगकर सुरत सहज में अपने स्रोत, प्रभु के धाम, पहुंच जाती है।

इस रास्ते में सबसे महत्वपूर्ण चीज़ है, ध्यान एकाग्र करने की शक्ति का विकास। तवज्जो, जागृति, होश या चेतनता, ये सब आत्मा की ताकतें हैं। सुरत-शब्द योग का साधक गुरू चरणों में बैठ कर इन तीनों शक्तियों को दो भ्रू-मध्य, आंखों के पीछे, (आज्ञा-चक्र पर) एकाग्र करने की कला सीखता है। मन इधर-उधर भटकने न पाये और तवज्जो अन्तर में टिकी रहे, उसके लिए सत्गुरू शिष्य को सुमिरण के लिए नाम के अक्षर देते हैं। गुरु-मन्त्र के अक्षरों का जाप या सुमिरण ज़बान से नहीं, मन से करना है, एक-एक अक्षर को ठहर-ठहर कर सोचना है। गुरु-मन्त्र के शब्दों में प्रभु में अभेद पूर्ण समर्थ सन्त सत्गुरू की charging, उनकी सिद्धि की ताक़त होती है। जैसे-जैसे दो भ्रू-मध्य, आखों के पीछे, तवज्जो एकाग्र होती जाती है, अंधेरे का पर्दा हल्का पड़ता जाता है और रोशनी की झलकें मिलनी शुरू हो जाती हैं, कभी बिजली की सी चमचमाहट, कभी रोशनी के दायरे से, आते हैं और हट जाते हैं। फिर नियमित रूप से सुमिरण करने से, जैसे-जैसे ध्यान अन्तर मे टिकने लगता है, रोशनी के अलग-अलग दायरे और नुक्ते एक जगह एकत्र होकर रोशनी अन्तर में स्थिर होने लगती है। धीरे-धीरे अन्तरीय गगन पर एक तारा उभरता है। उस

तारे के बीच में, लगातार, एक-टक देखने से, तारा हट जाता है ग्रौर उसकी जगह चांद दिखाई देता है। चन्द्रमा में ध्यान टिकाग्रो तो वो (ग्रन्तर का चांद) फट जाता है ग्रौर सूर्य निकल ग्राता है।

जैसे-जैसे दो भ्रू-मध्य ग्रांखों के पीछे (जहां ग्रात्मा का ठिकाना है इस शरीर में) सुमिरण द्वारा तवज्जो एकाग्र होती जाती है तो रोशनी के साथ ग्रनहत्त शब्द भी सुनाई देने लगता है। सुमिरण के ग्रतिरिक्त साधक को ग्रन्तर में भजन ग्रर्थात नाद-श्रवण का ग्रभ्यास भी करना पड़ता है। ग्रन्तर में ध्यान एकाग्र होने के साथ शरीर के सुन्न होने का ग्राभास हमें होता है। हमारे शरीर में दो धारायें काम करती हैं, एक motor currents, ग्रर्थात प्राणों की धारा, दूसरी sensory currents ग्रर्थात सुरति की धारा। सुमिरण-ध्यान में एकाग्रता वनने के साथ जव शरीर के रोम-रोम में फैली सुरति सिमटती है तो प्राण (प्राणों की धारा)तो ग्रपना काम करते रहते हैं लेकिन sensory currents, सुरति की धारा, ग्रर्थात शरीर में व्याप्त चेतन-सत्ता, ऊपर को सिमटना शुरू कर देती है, जैसे मौत के वक्त होता है, जब ग्रात्मा शरीर को छोड़ती है। लेकिन जीते-जी मरने का तजरवा, जो पूर्ण समर्थ सतगुरू के मार्गदर्शन एवं संरक्षण में किया जाता है, वो मौत की तरह दुखदाई नहीं होता वरन उसमें ग्रानन्द ग्रौर मस्ती की ग्रनुभूति होती है। रूह के सिमटने की प्रक्रिया सुमिरण से शुरू हो जाती है ग्रौर भजन (नाद-श्रवण) में, जव हम ग्रन्तर शब्द-कीर्तन में लीन होते हैं, वो (सुरत के सिमटने की क्रिया) तेज़ हो जाती है। महापुरुषों (सन्तों-महात्माग्रों-वलियों-फ़कीरों) के कलामों, वाणियों ग्रौर लिखतों में जहां ग्रन्तर में तारा मण्डल, चन्द्र मण्डल ग्रौर सूर्य मण्डल का ज़िक्र ग्राता है उसी तरह घण्टे, शंख, वाँसुरी, बादल की गरज़, ढोल ग्रादि की सुरीली ध्वनियों के भी इशारे मिलते हैं।

जव रूह पिण्ड (स्थूल शरीर) को पूर्णतया खाली कर देती है, तो सूर्य हट जाता है ग्रौर सतगुरू का दिव्य स्वरूप सामने ग्रा जाता है। उस समय शिष्य देखता ग्रौर ग्रनुभव करता है कि सतगुरू हर वक्त उसके ग्रंग-संग सहाई हैं, पल-पल उसकी संभाल (रक्षा एवं मार्गदर्शन) कर रहे हैं, वाहर दुनिया में भी, ग्रन्तरीय दिव्य मण्डलों में भी। दुनिया के इष्ट-मित्र, संवधी-रिश्तेदार, हर वक्त हमारे साथ नहीं रह

सकते, लेकिन सत्गुरू हमेशा साथ रहते हैं, वो हम से ज्यादा हमारे निकट हैं। जब शिष्य देखता है कि उसका मार्गदर्शक, जो पूर्ण समर्थ है, उसके साथ-साथ चल रहा है, रक्षक और सहायक बन कर, तो वो उसका शरणागति हो जाता है, गुरु-इच्छा समर्पित हो जाता है। गुरू दरजे-बदरजे दिव्य मण्डलों को पार कराते हुए शिष्य को महाचेतन प्रभु की गोद में पहुंचा देता है।

निर्देशन तन्त्र : सन्त सत्गुरू

बाह्य अन्तरिक्ष की उड़ान के लिए Launching Pad या अड्डा (जिस से यान छोड़ा जाता है) और अन्तरिक्ष में उड़ान करने के लिए यान की जरूरत है, उसके साथ एक पाइलट अर्थात यान चालक और साथ में एक निर्देशन तन्त्र दरकार होता है, यान को अन्तरिक्ष में उसके Orbit अर्थात परिक्रमा-पथ से इधर-उधर भटकने से बचाने तथा उसकी रक्षा करने के लिए। बाह्य अन्तरिक्ष की यात्रा एक योजना-बद्ध अभियान है, जिस में हजारों यन्त्रविद (तकनीशियन), शिल्पी, तथा वैज्ञानिक मिलकर Data अर्थात सूचना-निर्देशन आदि का पूरा कार्य-क्रम तैयार करके उसे कम्प्यूटर (परिकलक) में भर देते हैं, जो लाखों मील दूर से अन्तरिक्ष की उड़ान का निर्देशन तथा संकट पड़ने पर सहायता भी करता है, जिस से अन्तरिक्ष यान में यात्रा करने वालों की उड़ान सफल हो और वो दुर्घटना से बचे रहें। लेकिन अन्तरीय अन्तरिक्ष में चढ़ाई करने के लिए सन्त-सत्गुरू के अतिरिक्त किसी अन्य दूसरे व्यक्ति की मदद की जरूरत नहीं। वहां केवल सत्गुरू का, मानव तन में काम करने वाली गुरू या प्रभु-सत्ता का, सहारा है, "एक भरोसो, एक बल, एक आस-विश्वास।" ज़िन्दा सत्स्वरूप महापुरुष (दिवंगत महापुरुष ये काम नहीं कर सकते) हमारा मार्गदर्शन करता है और नाम या शब्द के जहाज़ में सवार करा के हमें अपनी आखिरी मंजिल, प्रभु के धाम, पहुंचा देता है। वो हमें जीते-जी मरने की कला सिखाता है, अपनी दयादृष्टि या तवज्जो का उभार देकर देहाभास से ऊपर लाता है, हमारी अन्तर की आंख पर पड़े स्याही के पर्दे को हटाता है, जिस से हम अन्तर में उस प्रभु की ज्योति को देखने वाले हो जाते हैं, हमारे कानों पर लगी मुहरों को तोड़ता है, जिससे हम प्रभु के नाद को, जो हर वक्त हमारे अन्तर में

हो रहा है, सुनने वाले हो जाते हैं।

लोग अक्सर मुझे पूछते हैं कि परमार्थ में ज़िन्दा गुरू की क्या ज़रूरत है ? वो कहते हैं, "दुनिया में भगवान महावीर, गौतम बुद्ध, इशु मसीह, हजरत मुहम्मद और गुरू नानक जैसे महापुरुष हो चुके हैं जिनकी शिक्षाओं से हम लाभ उठा सकते हैं। फिर आज ज़िन्दा गुरू की क्या जरूरत है ?" बड़ी हैरानी की बात है कि जब इन्सानी कार्य-व्यवहार के सभी क्षेत्रों में ज़िन्दा गुरू की जरूरत को हम बगैर किसी हील-दलील के स्वीकार करते हैं, उस पर कोई आपत्ति हमें नहीं होती, फिर अध्यात्म या रूहानियत के क्षेत्र में ज़िन्दा गुरु की आवश्यकता की बात पर हमें परेशानी क्यों होने लगती है ? शिक्षा के क्षेत्र में ज़िन्दा अध्यापक की जरूरत को हम खुले दिल से स्वीकार कर लेते हैं, अपने बच्चों को हम (ज़िन्दा अध्यापकों से) शिक्षा ग्रहण करने के लिए स्कूलों-कालिजों में दाखिल कराते हैं। विज्ञान के किसी क्षेत्र में—मान लीजिए मैं भौतिक विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करना चाहता हूं, तो मैं फ़िज़िक्स (भौतिक विज्ञान) के किसी माहिर अनुभवी प्रोफ़ैसर के पास जाऊंगा, वो प्रोफ़ैसर हिन्दू है, मुसलमान है, उसके धर्म, जाति, नस्ल से मुझे कोई सरोकार नहीं होगा। मैं सिर्फ ये देखूंगा कि वो भौतिक विज्ञान का माहिर है या नहीं ? और उसके साथ अच्छा प्रोफ़ैसर भी है कि नहीं ? इसी तरह हमें चित्रकला सीखना हो तो हम एक माहिर आर्टिस्ट (चित्रकार) के पास जाते हैं। मैं स्वयं एक शाइर (कवि) हूं, मुझे शाइरी की कला, जिसमें पिंगल, उर्दू में जिसे उरूज़, कहते हैं, तथा अन्य दूसरी नफ़ासतें और बारीकियां उर्दू शाइरी की सीखने के लिए, उस ज़माने के नामवर शाइर हजरत शमीम करहानी साहब के चरणों में जाना पड़ा।

जब जीवन के अन्य दूसरे क्षेत्रों में जीवित गुरू का कोई स्थानापन्न (अर्थात जगह लेने वाला) नहीं, तो अध्यात्म के क्षेत्र में इस सिद्धान्त को क्यों न लागू करें! वास्तव में अध्यात्म के क्षेत्र में कुछ और भी विशेष कारण हैं जिन से ज़िन्दा गुरु की शिक्षा तथा मार्गदर्शन हमारे लिए ज़रूरी हो जाता है। इशु मसीह कहते हैं, "जब मैं जनसमूह से बात करता हूं, तब मैं संकेतात्मक शैली में, दृष्टान्त द्वारा बात करता हूं, लेकिन अपने शिष्यों से मैं साफ़-स्पष्ट, सीधी,

बात करता हूं।" सन्तों-महात्माओं-वलियों-फ़कीरों को अन्तर में जो अनुभव हुए, उन्होंने अपने वो तजरबे धर्मग्रन्थों में लिख दिए। लेकिन वो अनुभव बुद्धि-विचार की गमता से परे हैं, वो अगम की वार्ता है, जिसे किसी भी भाषा में समझा-समझाया नहीं जा सकता, इस लिए महापुरुषों को प्रतीकात्मक शैली में कथा एवं दृष्टान्त द्वारा उन अनुभवों को वर्णन करना पड़ा—वो पूरा बयान नहीं, सिर्फ़ इशारा है, जिसे कोई भेदी अर्थात आत्मानुभवी पुरुष ही समझ सकता एवं दूसरों को समझा सकता है। हम इन दृष्टान्तों को पढ़ तो सकते हैं, इन का सही अर्थ नहीं समझ सकते, जब तक कोई अनुभवी महापुरुष, जिसने अन्तर दिव्य मण्डलों की यात्रा की है, हमें उन मण्डलों की सैर न कराए।

ये सारे धर्मग्रन्थ क्या हैं ? इन में महापुरुषों के निजानुभवों का, जो उस परम सत्य (परमात्मा) को पाने के सिलसिले में उन्हें हुए, उत्कृष्ट वर्णन है, अन्य दूसरे लोगों को बताने-समझाने के लिए, जिससे उन में भी परमार्थ के लिए रुचि एवं लगन पैदा हो। अनुभवी महापुरुषों ने अपने अन्तर को खोजा (अर्थात अन्तरीय अन्तरिक्ष में चढ़ाई की) और उस यात्रा में जो अनुभव उन्हें हुए, लोगों की हिदयात (मार्गदर्शन) के लिए उन्होंने ग्रन्थों-पोथियों में लिख दिए। उन लिखतों का सही अर्थ समझने के लिए भी हमें किसी जीवित मार्गदर्शक की सहायता दरकार है, जिसने अपने अन्तर में चढ़ाई की है और हमें भी अन्तर दिव्य मण्डलों की सैर करा सकता है। दृष्टान्त में बात करें, तो धर्मग्रन्थों की लिखतें सौ साल से जादू की नींद सोई उस राजकुमारी के समान हैं, जो एक राजकुमार के हाथों का स्पर्श पाकर-लम्बी नींद से जाग उठी और उसके जागते ही आस-पास का सारा वातावरण भी जाग उठा। ये धर्मग्रन्थ भी जिन्दा सत्स्वरूप हस्ती का जादुई स्पर्श पाकर जाग उठते हैं और बोलने लगते है, ऐसी सहज-स्पष्टता के साथ, कि वही बातें, जो दिमाग़ का पूरा ज़ोर लगाने पर भी समझ न आती थीं और वाचक ज्ञानियों की व्याख्या से और उलझती चली जाती थीं, अब उन्हीं लिखतों का एक-एक शब्द हमारे दिल की गहराइयों में उतरता चला जाता है। हम हैरान रह जाते हैं कि इतनी साफ़-सीधी बात को व्याख्याकारों ने (ग्रन्थों-पोथियों को

पढ़कर बुद्धि-विचार द्वारा उनका अर्थ करने वाले तथाकथित विद्वानों ने (जिनका अपना अनुभव नहीं) कितना उलझा के रख दिया है ?

बुद्धि-विचार की भी जरूरत है, केवल एक वात को समझने के के लिए—उससे ज्यादा नहीं। समझना, पाना नहीं। सन्त मत का मूल तथा आधार है, अनुभव। अध्यात्म विद्या या संत मत में, बुद्धि-विचार पर आधारित मान्यता एवं अन्ध विश्वास का कोई स्थान नहीं। सन्तों की तालीम इस विषय में वड़ी साफ़-स्पष्ट है। गुरुवाणी का वाक है :

जव लग न देखूं अपनी नैनी ॥
तव लग न पतीजूं गुरु की वैनी ॥

गुरू का कथन तथा महापुरुषों की वाणियां एक वात बुद्धि-विचार द्वारा समझने की हद तक ठीक हैं, लेकिन जव तक ग्रन्थों-पोथियों में वर्णित अनुभव, हमारा निज का अनुभव न वने, उस परम् सत्य की प्रतीति न हो, विश्वास का दृढ़ आधार नहीं वनता। जव तक हम अपने अन्तर में प्रवेश कर के अन्तरीय गगन मण्डल की चढ़ाई न करें, तव तक ग्रंथों-पोथियों में वर्णित नूर-नज़ारे, मंजिल और मकाम, हमारे लिए किस्से-कहानियां है। ग्रंथों-पोथियों की लिखतों का सही अर्थ समझने के लिए भी ज़िन्दा सत्स्वरूप हस्ती की, पूर्ण समर्थ सन्त सतगुरु की, वड़ी भारी जरूरत है, लेकिन उस से कहीं ज्यादा ज़रूरत समर्थ गुरू की हमें अन्तरीय गगन मण्डल की यात्रा में पड़ती है। उसका (सन्त-सतगुरू का) अन्तर दिव्य मण्डलों में रोज़ का आना-जाना है, वो रस्ते के हर मोड़ से वाक़िफ़ है, और हमें दरजे-वदरजे सारी मंज़िलों और मुकामों से निकालकर आखिरी मंज़िल, प्रभु के धाम (सचखण्ड, सतनाम) पहुंचा देता है। गुरू के विना इस मार्ग पर चलना तो दूर रहा, इस रस्ते पर आ ही नहीं सकते। वही (गुरू ही) है जो अपने प्रेम और दयामेहर से हमें अपने चरणों में बुलाता है। पहले वो हम से प्रेम करता है, हम पर दया करता है। हमारे मन में उसके लिए जो प्रेम उपजता है, वो उसके प्रेम की प्रतिक्रिया मात्र है, उसके प्यार के जवाव में है। एक सूफ़ी महापुरुष कहता है :

इश्क अव्वल दर दिले माशूक पैदा मी शवद।

अर्थात प्रेम पहले प्रियतम (गुरू) के हृदय में पैदा होता है। ये

उसके प्रेम का ही असर है कि प्रेमी उसके चरणों में बरबस खिंचा चला आता है। वो हमें प्यार न करे तो हम उसके पास कैसे जा सकते हैं ? हम तो खोई हुई भेड़ें हैं। हमें अपना होश नहीं, अपने गडरिये को हम कैसे ढूंढ सकते हैं ? गडरिया (सन्त-सत्गुरू) हमारे हाल पर तरस खाकर radiation से, प्रेम की धारा से जो उसके पावन शरीर के रोम-रोम से प्रसारित होती है, हमें अपने चरणों में बुला लेता है।

वो (सत्गुरू) कुल-मालिक की ओर से अध्यातम के अनन्त भण्डार हमारे लिए लेकर आते हैं, और उसे दोनों हाथों से बांटते और लुटाते चले जाते हैं। वो हमारी त्रुटियों और विकारों को, हमारी क्षुद्रता और तुच्छता को, नहीं देखते, हमारे गुनाहों की तरफ़ नज़र नहीं करते। अगर वो ऐसा करते तो हममें से कोई उनकी दयामेहर का अधिकारी नहीं हो सकता था। सबसे बड़ी, अनमोल दात, जो वो हमें देते हैं, वो नाम की दात है। नामदान या दीक्षा के समय वो अपनी तवज्जो का उभार देकर हमारी सुरत या आत्मा को मन-इन्द्रियों से ऊपर लाकर नाम से (ज्योति और श्रुति या नाद से, जो उस करन-कारण प्रभु-सत्ता या नाम की अभिव्यक्ति के दो स्वरूप हैं) जोड़ देते हैं। देहाभास से ऊपर लाकर वो हमें जीते-जी मरने की कला सिखाते हैं जो वास्तव में जीने की कला है, क्योंकि उससे अमर जीवन का द्वार हम पर खुल जाता है। सुविख्यात ईसाई चिन्तक थामस ए केम्पिस का कथन है :

Learn to die so that you may begin to live.

अर्थात जीते जी मरना सीख, ताकि हमेशा की जिन्दगी (अमर जीवन) तुझे मिल जाए। कुरान शरीफ़ में आता है, "मौतू किब्लन्तु मौतू" अर्थात मरने से पहले मर। सन्त दादू दयाल इस बात को यूं बयान करते हैं।

दादू पहले मर रहो पाछे मरे सब कोय ॥

अर्थात मौत का समय आने पर सभी मरते हैं, मौत आने से पहले क्यों न मरो, ताकि मौत के भय से तुम हमेशा के लिए आज़ाद हो जाओ। इसी संदर्भ में इशु मसीह का भी कथन आता है। एक बार उन्होंने अपने शिष्यों से कहा :

Except a man be born again he cannot enter the Kingdom of God.

अर्थ: "जब तक इन्सान दोबारा जन्म नहीं लेता, अर्थात द्विज या दोजन्मा नहीं बनता, वो खुदा की बादशाहत में दाखिल नहीं हो सकता।" उनके शिष्यों में निकोडेमस नाम एक बहुत पढ़ा-लिखा व्यक्ति था। इशु-मसीह की बात उसके पल्ले नहीं पड़ी। वो कहने लगा, "प्रभु! हमें बताओ, हम कैसे माता के गर्भ में प्रवेश करें, जिससे हम दोबारा जन्म ले सकें?" इशु ने कहा, "हाड-मांस के इस शरीर से हाड-माँस का शरीर पैदा होता है, और आत्मा, आत्मा से पैदा होती है।" आत्मा करके तुम तभी पैदा होगे जब तुम शरीर से, इस पंच-भौतिक देह से, ऊपर उठ जाओ।

जीते-जी मरने की कला सिखाने के सिलसिले में ज़िन्दा सत्स्वरूप महापुरुष हमें दो भ्रू-मध्य, दोनों आँखों के पीछे, तीसरे तिल या शिवनेत्र पर ध्यान एकाग्र करने का भेद देते हैं, जहां शरीर में आत्मा का ठिकाना है। जब हमारी फैली हुई तवज्जो वहाँ एकाग्र हो जाती है और शरीर का भान नहीं रहता (वो निश्चेत हो जाता है) तब सन्त-सत्गुरू हमारी आंख (अन्तर की आँख) पर लगी मोहरों को तोड़ कर हमारी अन्तर की आँख अर्थात दिव्य चक्षु या शिवनेत्र, को खोल देता है। इशु-मसीह के शब्दों में:

If thine Eye be single, thy whole body shall be full of Light.

कि अगर दो से तेरी एक आंख बन जाए, तो तेरा सारा शरीर प्रकाश से भर जाएगा। वो (प्रभु-रूप महापुरुष) हमारी अन्तर की आंख पर लगी मोहरें ही नहीं, हमारे कानों पर लगी मोहरों को भी तोड़ देता है, जिससे हम अन्तर में उस प्रभु की ज्योति को देखने और अन्तर के कानों से उस प्रभु के नाद को (जो हर वक्त हमारे अन्तर में हो रहा है) सुनने योग्य हो जाते हैं। सुविख्यात सूफ़ी फ़कीर ख्वाजा हाफ़िज़ साहब फरमाते हैं:

कस न दानेस्त कि मंज़िलगहे माशूक कुजास्त।
हमीं दानी कि अज़ाँ बाँगे-जरस मी आयद॥

अर्थात, "कोई नहीं जानता कि प्रियतम की मंज़िल (अर्थात प्रभु का धाम) कहां है? इतना ज़रूर है कि वहां से घण्टे की आवाज़ आ

रही है।"

जब तवज्जो दो भ्रू-मध्य आँखों के पीछे (जहाँ शरीर में आत्मा की बैठक है) एकाग्र हो जाती है, तो सुरति की धारा ऊपर सिमटना शुरू हो जाती है और तारा मण्डल, चन्द्र मण्डल तथा सूर्य मण्डल को पार करने के बाद अन्तर में गुरू के दिव्य (नूरी) स्वरूप के दर्शन हमें होते हैं। ये दिव्य स्वरूप इतना मनमोहक और आकर्षक होता है कि मन बरबस खिचा चला जाता है और हमारी सुरति या आत्मा अपना आपा भूलकर उसमें लीन होने लगती है। सत्गुरू हमारी तरह इन्सानी शक्ल रखते हैं, वही हाथ पैर, वही सब कुछ। देखने में वो आम इन्सानों की तरह इन्सान ही नज़र आते हैं, मगर वो कुछ और भी हैं। एक सूफ़ी शाइर के कथनानुसार, "तन मियाने खल्क ओ रूह बर हफ़्त आसमां" कि देह कर के वो इन्सानों में इन्सान बन कर विचरता है, लेकिन रूह उसकी सात आसमानों के पार दिव्य मण्डलों में विचरती है। जिस्म करके वो अपने सहजातीय इन्सानों के साथ जुड़ा हुआ है और आत्मा करके उस परमात्मा से एक-रूप होने के कारण परमात्मा के जो गुण हैं वो सारे गुण सत्गुरू में भी विद्यमान रहते हैं। सत्गुरू में प्रभु के सारे गुण झलकते नज़र आते हैं। अपने चरणों में बुलाकर, अपनी छत्रछाया में लेने के पश्चात् सत्गुरू पग-पग पर शिष्य की प्रतिपालना, संभाल (रक्षा) एवं मार्गदर्शन करते हैं, लेकिन शिष्य को (जिसकी अन्तर की आंख अभी नहीं खुली) सत्गुरू का अदृष्य हाथ काम करता दिखाई नहीं देता। अन्तर में सत्गुरू के नूरी स्वरूप का दर्शन पाने के बाद शिष्य प्रत्यक्ष देखता है कि सत्गुरू किस तरह जिन्दगी के हर मोड़ और अन्तर की यात्रा में पग-पग पर, उसकी संभाल (रक्षा) और मार्गदर्शन कर रहे हैं। संभाल पहले दिन से ही (जब सत्गुरू ने उसे अपने संरक्षण में लिया था) हो रही थी, मगर शिष्य उसे देख नहीं पाता था, वो उसके लिए केवल धारणा एवं मान्यता की बात थी। अब (आंख खुलने के बाद) तो वो पल-पल उन्हें संभाल करते देखता है।

सत्गुरू अपने नूरी स्वरूप में शिष्य को दर्जे-बदर्जे अन्तर दिव्य मण्डलों को पार करा के मंज़िल की ओर ले चलते हैं। हमारी आत्मा पर तीन शारीरिक आवरण यानि तीन जिस्मों के ग़िलाफ़ चढ़े हुए

हैं—स्थूल शरीर या पिण्ड, सूक्ष्म शरीर या अण्ड और कारण शरीर या ब्रह्मण्ड। स्थूल शरीर अर्थात पिण्ड से ऊपर आकर हम (अर्थात हमारी सुरति या आत्मा) सूक्ष्म मण्डल में प्रवेश करते हैं। सत्गुरु दयाल अपने संरक्षण एवं मार्गदर्शन में हमें सूक्ष्म मण्डल से कारण मण्डल (ब्रह्मण्ड) और उसके आगे पारब्रह्म में ले जाते हैं। आत्मा पर चढ़े हुए दोनों शारीरिक आवरण या ग़िलाफ़ वहाँ उतर जाते हैं और रूह (आत्मा) मानसरोवर या हौज़े कौसर में स्नान करती है, जिससे मन-माया की सारी मैल उतर जाती है और आत्मा अपने निर्मल चेतन स्वरूप में स्थित हो जाती है, और बरबस पुकार उठती है, 'सोहं' अर्थात हे प्रभु ! जो तू है सो मैं हूं। यहाँ पहुंच कर शिष्य की आत्मा गुरू में लीन होना, उससे एक-रूप होना, शुरू कर देती है। ये वो मंज़िल है जिसे सूफ़ी फकीरों की इस्तेलाह या परिभाषा में 'फ़ना-फिल-शैख' होना कहते हैं, अर्थात अपनी हस्ती का मिटा कर गुरू से एक हो जाना, उसमें समा जाना। उससे आगे सुरति ऊंचे दिव्य मण्डलों को पार करती हुई अपनी आखिरी मंज़िल, प्रभु के धाम या सतलोक, में पहुंच कर प्रभु में लीन हो जाती है, जिसे सूफ़ी फ़कीरों ने "फ़ना-फ़िलाह' की संज्ञा दी है, जिस का अर्थ है, प्रभु से एक हो जाना, उस में समा जाना। ये अवस्था अनिर्वचनीय है, कहन-सुनन से परे है। महापुरुषों के कथनानुसार वहां आनन्द ही आनन्द है, मस्ती ही मस्ती है, एक ऐसी अवस्था है, जहाँ सब कुछ जाना हुआ हो जाता है, जिसे पाकर सब कुछ पाया हुआ हो जाता है। वहाँ पहुंच कर हमेशा की मुक्ति मिल जाती है, जन्म-मरण का, आने-जाने का, सिलसिला ख़त्म हो जाता है।

अध्यात्म पर बात-चीत के दौरान मैं ने ये महसूस किया है कि पश्चिम के परमार्थाभिलाषियों के मन में एक हौल-सा, एक धड़का सा, लगा रहता है कि हम प्रभु में लीन हो गए, उस में समा गए, तो हमारा अस्तित्व कहां रहेगा ? ये अस्तित्वहीनता का भय निर्मूल एवं निराधार है। प्रभु से एक होने की अवस्था में ये होता है कि हमारी अहम् या खुदी विकास की मंज़िलें तय करके इतनी व्यापक हो जाती है कि वो प्रभु से अभेद हो जाती है। वास्तव में वो अहम् या खुदी के फैलाव की चरम अवस्था है, जिसमें हम कुछ खोते नहीं, वरन पाते

हैं। हम इस तुच्छ सीमावद्ध जीवन से उठकर एक महान, व्यापक जीवन में जाग उठते हैं, जहाँ हम कुल-मालिक परमात्मा के सचेतन सहकार्यकर्ता हो जाते हैं। मानव जीवन की ये महानतम उपलब्धि है, आत्मा और परमात्मा के मिलाप की, एकता और अभेदता की। ये उच्चतम अवस्था, अनिर्वचनीय तथा कहन-सुनन से परे की चीज़ है। सन्तों ने इस लावयान और अकथनीय अवस्था के वारे में इतना ही संकेत दिया है कि वहां आनन्द ही आनन्द, मस्ती ही मस्ती, सरशारी ही सरशारी है, सदा एक-रस, कभी न टूटने वाली। वहाँ से फिर वापस दुनिया में नहीं आना पड़ता। जन्म-मरण का जो चक्र निरन्तर चल रहा है, ये रूहें उस चक्र के केन्द्र में, उसकी नाभि में, उस स्थिर, अविचल स्थान पर टिकी रहती हैं जो चलायमान नहीं, गिरायमान नहीं, सदा-सदा है और रहेगा। दूसरे शब्दों में इसे यूं भी कह सकते हैं कि मिलन तथा एकरूपता-अभेदता की ये वो अवस्था है कि जैसे सूर्य की किरण वापस सूर्य में मिल कर सूर्य हो जाती है, या जैसे पानी की बूंद समुद्र में मिलकर समुद्र बन जाती है।

वाह्य अन्तरिक्ष की यात्रा बड़े जोखिम का काम है। उसमें आकाश में उड़ते किसी उल्कापिण्ड से टकरा जाने का खतरा रहता है। और यदि अन्तरिक्ष यान अपने निर्धारित पथ से भटक जाए तो नभमण्डल के ग्रहों में से किसी भी खगोलीय पिण्ड की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से खिंचा हुआ उस पिण्ड की ओर चला जाए और नभ मण्डल की भूल-भुल्लइयां में चक्कर काटता रहे। इन खतरों से यान को बचाने के लिए धरती पर कंप्यूटरों का एक पूरा निर्देशन तन्त्र लगा रहता है। वाह्य अन्तरिक्ष की यात्रा में जो जोखिम है सो है, अन्तरीय गगन की यात्रा में उससे कहीं ज्यादा जोखिम उठाने पड़ते हैं। वहाँ पग-पग प्रलोभनों के जाल बिछे हुए हैं, जिन से वच निकलना मुश्किल है। कहीं भयानक दृश्य हैं, कहीं मनोहारी—ध्यान की एकाग्रता भंग करने के कई सामान हैं। सव से बड़ी रुकावट मन है। मन से पार पाना, उस के दायरे से निकलना, आसान नहीं। मन बड़ा चालाक दुश्मन है, इसके पास लाखों हथकण्डे हैं, आत्मा को वस में करने और अपने दायरे से बाहर जाने से रोकने के। सतगुरू अपने अथाह प्यार से, अपनी अपार दयामेहर से, शिष्य को मन के जाल से

निकालकर प्रभु के धाम ले जाते हैं, वरना जीव की क्या मजाल है कि वो मन के दायरे से निकल जाए। सो अन्तर की इस यात्रा में हमें पग-पग पर सतगुरू का संरक्षण एवं मार्गदर्शन दरकार है। सतगुरू दम-दम शिष्य की संभाल करते हैं, तभी वो इस बीहड़ पथ पर आगे बढ़ता है। यदि उनका हाथ सिर पर न हो तो वह इस कठिन यात्रा की प्रारंभिक मंज़िल पर ही दम तोड़ दे। कबीर साहब इसी लिए कहते है :

गुरू गोबिन्द दोनों खड़े का के लागूं पाय ॥
बलिहारी गुरू आपने जिन गोबिन्द दियो मिलाय ॥

बिना सतगुरू के परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती। हमारे मुर्शिदे-आज़म, परम सन्त श्री हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज, फ़र्माया करते थे, "मुझे भाई समझ लो, दोस्त समझ लो, टीचर समझ लो, बुज़ुर्ग समझ लो। जो मैं तुम से कहता हूं, वो बात सुनो, वैसे करो, अन्तर दिव्य मण्डलों में गुरू की शान को देखो तो जो चाहे मुझे कह लेना (अर्थात सच्चे पादशाह, सतगुरू आदि जो उपाधि चाहो मेरे लिए प्रयोग कर लेना)।"

अब हम अन्तरिक्ष यात्रा के सबसे महत्वपूर्ण तत्व पर विचार करें जो अन्तरिक्ष यान को विराट अन्तरिक्ष में चढ़ाई करने की शक्ति प्रदान करता है। वो तत्व है, विशेष प्रकार का ईंधन (जन-साधारण की समझ में आने वाली भाषा में, खास किस्म का पट्रोल कह लीजिए यद्यपि वो सही अर्थों में पट्रोल नहीं) जो यान में भरा जाता है, जिस से वो करोड़ों-अरबों मील की उड़ान कर ग्रहों तथा खगोलीय मण्डलों पर उड़ान करने की शक्ति एवं क्षमता प्राप्त करता है।

अन्तरिक्ष में उड़ान का ईंधन : प्रेम

बाह्य अन्तरिक्ष उड़ान के लिए भी विशेष प्रकार का ईन्धन दरकार होता है जो Space-Craft अर्थात अन्तरिक्ष यान में भरा जाता है। आम हवाई जहाज़ों में जो ईंधन भरा जाता है वो अन्तरिक्ष में उड़ान के करोड़ों-अरबों मील लम्बे फ़ासलों को तय करने में काम नहीं देता। ये तो रही बाह्य अन्तरिक्ष की बात। अन्तर की उड़ान के लिए भी हमें विशेष प्रकार का ईंधन दरकार है और वो ईंधन रासायनिक द्रव्यों का ईंधन नहीं। वो ईंधन है—प्रेम। परमात्मा प्रेम है। हमारी

आत्मा उस प्रभु की अंश है। ये भी प्रेम है। आत्मा के वापस प्रभु से मिलने का साधन या रास्ता भी प्रेम है। अगर हम मानव जीवन के परम लक्ष्य को पाना, अर्थात परमात्मा से मिलना, उस से एक होना, चाहते हैं, तो उसका एक ही रास्ता है—प्रेम का विकास, जो हम में जन्मजात है, हमारे अस्तित्व का अभिन्न अंग है। प्रेम का लफ़्ज़ हर वक्त हमारी ज़बान पर रहता है। हम बातें तो बहुत करते हैं, विश्व प्रेम की, इन्सानी भाईचारे की, अपने साथी इन्सानों के प्रति करुणा भाव की, मगर वो बुद्धि-विचार की, ज़बानी जमा-खर्च की बात है। ज़बान से हम बहुत कुछ कहते हैं, लंबे-चौड़े दावे भी करते हैं, लेकिन वो सारी बात ज़बानी-ज़बानी होती है, वो हमारे हृदय की, आत्मा की, बात नहीं, हम दिल और आत्मा की गहराईयों से प्रेम की बात पर विश्वास नहीं करते।

सेंट जान ने बड़े साफ़-स्पष्ट शब्दों में कहा, "जो प्रेम नहीं करता वो परमात्मा को नहीं जान सकता, क्योंकि परमात्मा प्रेम है।" दशम पादशाह, श्री गुरू गोविन्दसिंह जी महाराज फ़र्माते हैं :

साचि कहौं सुनि लेहो सबै, जिन प्रेम कियो तिनही प्रभु पायो ।।

ये महापुरुष उस प्रेम की बात कर रहे हैं, जो कण-कण में और जन-जन में व्याप्त है, हमारे लहू में रचा हुआ है, हमारे रोम-रोम में समाया है। ये वो प्रेम है जो प्यार भरी नज़र से खुदा को भी देखता है, इन्सान को भी। उसकी नज़र में खुदा इन्सान से और इन्सान खुदा से अलग नहीं। ये वो प्रेम है जो इस संसार और सांसारिक जीवन का अनादर नहीं करता। इस दुनिया से परे जो मण्डल हैं, रचना है, इस जीवन के परे जो जीवन है, उसकी अवहेलना नहीं करता। वो सबसे प्यार करता है, सब को गले लगाता है। उसका आदेश दोतरफ़ा है, जिस में सृष्टि और सृष्टिकर्ता, इन्सान और खुदा, दोनों से प्यार करना शामिल है। इस बात को इशु-मसीह ने अपने दो महत्वपूर्ण आदेशों में बड़ी खूबसूरती और सफ़ाई से बयान किया है। उन्होंने कहा :

"अपने प्रभु से प्यार कर, अपने पूरे हृदय से,
अपनी पूरी आत्मा से और अपने पूरे मन से।"

और साथ ही ये कहा :

"अपने पड़ौसी से वैसे ही प्यार कर जैसा प्यार तू अपने आप से करता है।"

ये वो प्रेम है जो सब सृष्टि को सहोदर समझता है, अपनत्व की दृष्टि से देखता है, क्योंकि सब उस परम-पिता परमात्मा के बनाए हुए हैं और जो व्यक्ति प्रभु की पैदा की हुई जीव-सृष्टि से, इन्सान-हैवान, पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़ों तक से, प्यार नहीं करता, वो उस परम-पिता परमात्मा से भी प्यार नहीं करता। ये वो प्रेम है, जो हमारे चिन्तन को उदात्त बनाता है, हमारी विचारधारा को ऊंचा उठाता है, विश्व प्रेम की स्वत: स्फूर्त प्रेरणा हमारे अन्तर में भर देता है जो छोटे से छोटे जीव को गले लगाती है। यही उमंग और प्रेरणा थी जिसके वशीभूत सेंट फ्रांसिस आफ असीसी ने गधे को गले लगा कर कहा था, "तू मेरा भाई है।"

पश्चिम के दार्शनिक एवं मनीषी पूर्वीय अध्यात्मवाद पर ये आरोप लगाते हैं कि वो जीवन को नकारता है, उसकी उपेक्षा करता है। एलबर्ट श्वाईज़र का कहना है कि भारत की योग विद्या संसार को सारहीन एवं अयथार्थ मानती है। वह जीवन के अनुभवों की वास्तविकता को स्वीकार नहीं करती। योग, जीवन के कर्तव्यों और दायित्वों से जान छुड़ाने का, दुनिया से पलायन का रास्ता सिखाता है। तो मैं सबसे पहले यह बात साफ कर देना चाहता हूं कि सुरति-शब्द योग (सन्त मत) Positive Mysticism का, सकारात्मक या रचनात्मक अध्यात्म का रास्ता है। वो Negative Mysticism का, नकारात्मक अध्यात्म का, दुनिया को, घर-बार और कार्य-व्यवहार को, त्याग कर एकान्त में जा बैठने का, रास्ता नहीं। सन्त-मत हमें ये नहीं सिखाता कि हम घर-बार, समाज, तथा देश के प्रति जो हमारे कर्तव्य तथा दायित्व हैं, उनको छोड़ कर हिमालय की कन्दराओं में या तपते रेगिस्तानों में चले जाएं और वहां संसार के कोलाहल से दूर, एकान्त में, घोर तपस्या का जीवन व्यतीत करें। यह सन्त मत की तालीम नहीं है। सन्त मत का जो रास्ता है, (दुनिया में रह कर, दुनिया के सारे कर्तव्य एवं दायित्व पूरे करते हुए अध्यात्म साधना करने का मार्ग) उसे मैं ने Positive Mysticism अर्थात रचनात्मक अध्यात्म की संज्ञा दी है।

सन्त मत: सकारात्मक अध्यात्म का मार्ग

हम दुनिया में रहते हैं, हमारे सिर पर कई ज़िम्मेदारियां हैं, कर्तव्य एवं दायित्व हैं, माता-पिता के प्रति, परिवार के प्रति, समाज तथा देश के प्रति। आज के युग और ज़माने में, जब विज्ञान के अविष्कारों के फलस्वरूप देशों के बीच दूरियां समाप्त हो रही हैं और इन्सान चांद-तारों तक जा पहुंचा है, हमारे दायित्वों में अन्तर्राष्ट्रीय तथा अन्तरिक्षीय ज़िम्मेदारियाँ भी शामिल हो गयी हैं, जिन्हें हमने अपनी बुद्धि एवं सामर्थ्य के अनुसार पूरा करना है। ये सारे काम करते हुए हम ये न भूलें कि मानव जीवन का परम लक्ष्य और ध्येय है कि हम अपने आपको जानें और परमात्मा से मिलें।

सुरति-शब्द योग हमें सिखाता है कि जिन्दगी की उपेक्षा करके, व्यावहारिक जीवन और उसकी ज़िम्मेदारियों को त्याग कर, परमार्थ की कमाई या सुरत-शब्द का अभ्यास नहीं किया जाना चाहिए। दुनियादारी के कार्य-व्यवहार का नुकसान करके हमें अध्यात्म नहीं कमाना। अध्यात्म तो जीवन की चरम उपलब्धि है, वह जीवन को समृद्ध बनाने वाली चीज़ है। सन्त मत त्याग का रास्ता नहीं। सन्त मत हमें सिखाता है कि दुनिया में रहो, सारे काम करो, अपने कर्तव्य तथा दायित्व, परिवार के प्रति, समाज, देश और दुनिया के प्रति, पूरे करो, लेकिन उनमें खचित न हो। अनासक्त भाव से सारे काम करो। अगर हम ये गुर सीख लें कि एक समय में एक ही काम हम करें, पूरी तवज्जो और एकाग्रता के साथ, तो हम दुनिया के सारे काम और ज़िम्मेदारियाँ जो हमारे सिर पर हैं, उन्हें भी पूरी कर लेंगे और परमार्थ साधना भी, जो मानव जीवन पाकर हमारा मुख्य काम है। व्यस्त से व्यस्त पुरुष के लिए भी परमार्थ साधना के लिए रात का पूरा समय खाली पड़ा है। हजूरे-पुरनूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज के शब्दों में, "रात को जंगल बना लो। लोग एकान्त के लिए घरों के झंझटों से छुट्टी कर के जंगलों में चले जाते थे, तुम रात को जंगल बना लो। घर-बार के सारे झंझटों-झमेलों से छुट्टी कर दो और अपने आप में स्थित हो जाओ। तुम हो और प्रभु की मीठी, सुख-भरी याद हो। सारी रात तुम्हारी है।" एक बार तुम्हारे अन्तर में प्रभु का प्रेम बस जाए तो दुनिया के सारे काम-धन्धे करते हुए भी हर वक्त उस

की याद वनी रहेगी। जैसे पंजाबी में मिसाल है, "हथ कार वल दिल यार वल।" अर्थात हाथ काम में लगे रहे और दिल प्रभु प्रियतम की याद में लगा रहे।

तो सुरति-शब्द योग रचनात्मक अध्यात्म का मार्ग है। वो दुनिया को छोड़ने का रास्ता नहीं। दुनिया भी सफल हो, परमार्थ भी—"लोक सुखी परलोक सुहेले।" दुनिया भी कमाओ, परमार्थ भी। पश्चिम में युवतियां-युवक मेरे पास आते हैं, और कई वार मैं ये देखता हूं कि उन्होंने घर वालों से रिश्ता तोड़ लिया है। मैं सब से पहले यही वात उनसे कहता हूं कि अपने माता-पिता से पत्र-व्यवहार करके उन से दोवारा रिश्ता जोड़ लो। स्कूलों में पढ़ने वाले कई वच्चे मेरे पास आते हैं जो परमार्थ की लगन में स्कूल छोड़ चुके होते हैं। मैं दोवारा पढ़ाई शुरू करने का आदेश उन्हें देता हूं।

कई तलाक़-शुदा (तलाक़ लिए हुए) लोग वरवाद घर अपने पीछे छोड़ कर मेरे पास आते हैं, जव कि कई अभी तलाक़ लेने की वात सोच रहे होते हैं। मैं उन लोगों से कहता हूं कि विवाह कोई अनुवन्ध या कानूनी इक़रारनामा नहीं, वो एक धर्म संस्कार है, एक पवित्र धर्म वन्धन है, जिसे वनाए रखने और सफल वनाने के लिए उन्हें भरसक प्रयत्न करना चाहिए। अपने नौजवान दोस्तों को मैं हमेशा सुव्यवस्थित एवं भरपूर गृहस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करता हूं। कई लोग मदिरा तथा अन्य दूसरे मादक द्रव्यों के सेवन तथा ऐसे ही अन्य समाज विरोधी व्यसनों में फंसे होते हैं। मैं उन्हें प्यार से समझाता हूं, कि हम, अर्थात हमारी आत्मा, चेतन है। परमात्मा महा-चेतनता का सागर है, हमारी आत्मा उस सागर की बूंद है, ये भी चेतन-स्वरूप है। अपने अंशी, परमात्मा से मिलने के लिए हमें अपनी चेतनता को वढ़ाना है, उसका विकास करना है, जव कि मादक द्रव्यों (नशेदार चीज़ों) के प्रयोग से चेतनता का ह्रास होता है। नशेवाज़ों को शराव तथा अन्य दूसरे मादक द्रव्यों से हटाने के लिए मैं उन लोगों को अपने समाजों में सक्रिय जीवन व्यतीत करने तथा उस समाज के धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक समागमों एवं अन्य सार्व-जनिक कार्यों में सक्रिय भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करता हूं।

पाज़िटिव मिस्टीसिज्म या रचनात्मक अध्यात्म हमें Religion of

Man की, मानव धर्म को, शिक्षा देता है। हमें ये कभी नहीं भूलना चाहिए कि हम आत्मा हैं। हम जड़ शरीर नहीं, चेतन आत्मा हैं, इस शरीर के निवासी, इसे चलाने वाले। सत्गुरू ने हमें meditation अर्थात सुमिरण-ध्यान द्वारा तवज्जो को एकाग्र करने की युक्ति दी है, उसकी कमाई करके हम चेतनता का विकास करें। लेकिन उसके साथ ही हम विश्व नागरिक भी हैं, इस दुनिया के शहरी भी हैं। हमारे आस-पास जो लोग रहते हैं, या जिन लोगों के बीच में हम रहते हैं, वो भी प्रभु के बच्चे हैं—"एक पिता एकस के हम बारक" होने के नाते हम सभी एक विशाल प्रभु-परिवार के सदस्य हैं और आपस में भाई-भाई और बहन-भाई का हमारा नाता है, इस लिए हमारा ये कर्तव्य बनता है कि हम उनके हित का ख्याल रखें। ये एक ऐसा दायित्व है जिसकी उपेक्षा हम नहीं कर सकते।

नेक-पाक-सदाचारी जीवन अध्यात्म की मंज़िल पर पहुंचने की सीढ़ी या ज़ीना है। रूहानियत को पाने के लिए नैतिकता का, सदाचार का सुदृढ़ आधार, एक पक्की नींव होनी चाहिए। उसके लिए सत्य, अहिंसा, शील (ब्रह्मचर्य) नम्रता, निष्काम सेवा आदि दैवी गुण हम अपने अन्दर पैदा करें, उनका विकास करें। महापुरुष, जो आज दिन तक आए, उन की एक ही तालीम रही, जिसके दो मुख्य अंग हैं, उस परमसत्ता या सिर ताकत (परमात्मा) को पाना, जो सब की करता-धरता-प्रतिपालक और जीवनाधार है, जो सबको बनाने वाली है और सबको लिए खड़ी है, और दूसरी चीज़ है, सदाचार, सच्चा और सुच्चा जीवन। गुरू नानक साहब के कथनानुसार, "सत (परमात्मा) सबसे ऊपर है, लेकिन सच्चा-सुच्चा जीवन, नेक-पाक सदाचारी जीवन, सत से भी ऊपर है, "सत ऊपर आचार।" तो महापुरुषों की शिक्षा के अनुसार मानव-निर्माण अर्थात इन्सान का सही मानों में इन्सान बनना और प्रभु को पाना, ये दोनों काम एक दूसरे के पूरक हैं और साथ-साथ चलने चाहिएं। हजूरे-पुरनूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज ने इसीलिए सदाचार और मानव निर्माण पर बड़ा ज़ोर दिया है। उनके कथनानुसार, "इन्सान का (सही मानों में) इन्सान बनना मुश्किल है। अगर इन्सान सचमुच इन्सान बन जाए तो परमात्मा को पाना कुछ भी मुश्किल नहीं।" अध्यात्म पथ में

सदाचार तथा मानव निर्माण का कितना महत्व है, उसका अनुमान कबीर साहब की इस तुक में मिलता है :

कबीर मन ऐसो निर्मल भयो जैसो गंगा नीर।
पाछे-पाछे हरि फिरें कहत कबीर कबीर ॥

हज़ूरे-पुरनूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज इस संदर्भ में मशहूर उर्दू शाइर 'इक़बाल' की कविता के हवाले से एक दृष्टान्त प्रस्तुत किया करते थे कि, "हज़रत मूसा खुदा की तलाश में 'तूर' पहाड़ पर गए, क्या उन्हें मालूम नहीं था कि, 'खुदा हमदर तलाशे आदमी दारद,' अर्थात खुदा तो खुद इन्सान को तलाश करता फिरता है कि कोई मुकम्मल इंसान, कोई पूर्ण पुरुष, मिले (जिसके घट में बैठ कर मैं काम करूं)।" सन्त कृपालसिंह जी महाराज ने सुनिश्चित, सहज-साध्य (आसान) व्यावहारिक तरीका मानव निर्माण का प्रस्तुत किया—आत्म निरीक्षण अर्थात जीवन की पड़ताल की दैनिक डायरी, जिसमें आज तक आए सस्तवरूप महापुरुषों की वाणियों एवं कथनों, तथा धर्मग्रन्थ जो आज दिन तक लिखे गए, सबकी शिक्षाओं का सार उन्होंने पेश कर दिया। जीवन की पड़ताल की डायरी आज के युग और ज़माने को हज़ूरे-पुरनूर सन्त कृपालसिंह जी महाराज की ख़ास देन है। आज के वैज्ञानिक युग की परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं तथा जन-मानस के रुजहान एवं रुचि के अनुरूप ये डायरी, वैज्ञानिक आधार पर बनाई गयी है। हज़ूर महाराज जी ने तीन-सौ से अधिक महापुरुषों के जीवन-वृत्तान्त पढ़े, जिन्होंने जीवन के किसी क्षेत्र में नाम पैदा किया था। उन्होंने देखा कि हर बड़े आदमी के जीवन में, डायरी का ख्याल किसी न किसी शकल में मौजूद था और उनकी सफलता के पीछे जीवन की पड़ताल का बड़ा हाथ था। हज़ूरे-पुरनूर ने आत्म निरीक्षण की इस परंपरा को वैज्ञानिक आधार दे दिया। उन के कथनानुसार, "इन्सान कुछ भी न करे, पूरी ईमानदारी और सच्चाई के साथ ज़रा भी अपना लिहाज़ किए बगैर, अपनी त्रुटियों तथा विकारों को डायरी में दर्ज करे, इस दृढ़ निश्चय के साथ कि जो गलती आज हुई है वो कल न होने पाए, तो थोड़े दिनों में उसका जीवन पलटा खा जाएगा।" उन्होंने डायरी के अलग-अलग खाने बनाए। सत्य, अहिंसा, जीवन की पवित्रता, नम्रता, निष्काम सेवा,

आदि गुणों के, जो अध्यात्म के साधक को अपने अंदर पैदा करने चाहिएं । इन सद्गुणों का मन-वचन-कर्म से हम दिन में जितनी बार उल्लंघन करते हैं, उस का पूरा चिट्ठा हमें डायरी में दर्ज करना पड़ता है । मिसाल के तौर पर हम मन-वचन-कर्म से अहिंसा का उल्लंघन करते हैं, किसी का दिल दुखाते हैं, गाली-गलोच या मार-पीट करते हैं, किसी की निंदा-चुगली करते हैं, तो हमें डायरी में दर्ज करना होगा कि आज के दिन हमने इतनी बार अहिंसा के नियम का उल्लंघन किया है ।

महापुरुषों के जीवन वृत्तान्त आप पढ़ें, जैसा कि हजूर महाराजजी ने उनका गूढ़ अध्ययन किया (उन्होंने सन्तों-महात्माओं ही के नहीं, जीवन के हरेक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने वाले महापुरुषों के जीवन चरित्र पढ़े) तो आप यही पायेंगे कि उनकी सफलता में जीवन की पड़ताल का वड़ा हाथ था । हजूरे-पुरनूर ने कोई नयी चीज़ पेश नहीं की, सिर्फ उसको (जीवन की पड़ताल की पद्धत्ति को) एक सुनिश्चित, वैज्ञानिक आधार दे दिया । जहां सत्य, अहिंसा, जीवन की पवित्रता आदि का मन-वचन-कर्म से उल्लंघन का संबंध है वहाँ हम डायरी में Positive Marking करते हैं, अर्थात सीधा ये लिख देते हैं कि दिन भर में इतनी बार हमने सत्य का उल्लंघन किया, इतनी बार अहिंसा का । निष्काम सेवा जैसे काम जो हमें करने चाहिएं और हम नहीं करते, वहां हम Negative Marking करते हैं, उदाहरणार्थ आज के दिन हमें चार मौके मिले निष्काम सेवा के, साधन भी उपलब्ध था, लेकिन हम ने कुछ न किया, तो दो वार कर्तव्य से हम चूके ।

तो हमने पहले अच्छा इन्सान वनना है । अगर हम अच्छे इन्सान, अर्थात सही मायनों में इन्सान वन जाएं तो हम अच्छे ईसाई, एक अच्छे हिन्दू, अच्छे सिख, वन सकते हैं । यदि हम अच्छे इन्सान ही नहीं वने तो फिर हम न तो सच्चे सिख हैं, न सच्चे मुसलमान, न सच्चे ईसाई, न सच्चे हिन्दू हैं । सुरति-शब्द योग हमें सही मायनों में इन्सान, अर्थात सर्वांग-सम्पूर्ण मानव वनना सिखाता है, जो हर तरफ़ से और हर पहलू में, तन करके, मन करके, दिल-दिमाग करके, पूर्ण हो । इन्सान के तीन वड़े पहलू हैं, शरीर, मन, आत्मा । हम शरीर रखते हैं, हमें शरीर का समुचित विकास करना, इस शरीर को पूर्ण-

तया स्वस्थ रखना चाहिए। हम बुद्धि रखते हैं, हमें बुद्धि का विकास करना चाहिए। पिछले कई दशकों में हमने बुद्धि करके बहुत विकास किया है। आधुनिक युग में इन्सान ने साईंस और तकनीकी के क्षेत्र में आश्चर्यजनक अविष्कार किए हैं, जिनके कारण हमने दूरियों को कम कर दिया है और इन्सान इन्सान के नज़दीक आ गया है। लेकिन हम मात्र शरीर और बुद्धि ही नहीं हैं, हम आतमा भी रखते हैं, जो हमारा अपना आपा है। हम आत्मा देहधारी हैं। मन, बुद्धि और शरीर सब आत्मा के आधार पर चल रहे हैं, आत्मा ही से जीवन पाते हैं। तो हमने शरीर करके तो बहुत तरक्की की है और बुद्धि करके भी समुचित विकास किया है, मगर आत्मा करके हमने कोई तरक्की नहीं की। संत महात्मा हमें यही कहते हैं कि हमें आत्मा करके भी विकास करना चाहिए, तभी हम पूर्ण पुरुष कहला सकते हैं। आत्मा उस प्रभु की अंश है। आत्मा में वो सभी गुण हैं जो परमातमा में हैं।

जैसा कि मैंने पहले कहा, संत मत परंपरागत मान्यताओं तथा अंधविश्वास पर आधारित नहीं। संत मत की तालीम युक्ति युक्त एवं विवेक सम्मत है। उसमें कहीं कोई असंगति नहीं है। यदि वो शाकाहार पर ज़ोर देती है तो यह बात किसी परम्परागत मान्यता पर आधारित नहीं है। उसकी तह में प्रेम और अहिंसा का, जीओ और जीने दो का, सिद्धाँत काम कर रहा है। परमातमा प्रेम है। हम आत्मा हैं। आत्मा उस परमात्मा की अंश है। आत्मा देहधारी होने करके हम भी प्रेम स्वरूप हैं। इंसान होने के नाते हमें सब सृष्टि से प्यार करना चाहिए। मानव, पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े, वनस्पति, सब में जीवन है। यदि हम शाक-सब्जी ही खाएं, तब भी हम जीव सृष्टि की हत्या करते हैं। लेकिन शाक-सब्जी में केवल एक तत्व, जल, प्रबल है, अन्य तीन तत्व गौण हैं। कीड़े-मकोड़ों में दो तत्व, अग्नि और पृथ्वी, प्रबल हैं। पक्षियों में तीन तत्व, जल, वायु और अग्नि, पशुओं में चार तत्व, अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी, तथा मानव में पांच तत्व पूर्ण हैं। मानव में उपरोक्त चार तत्वों के अतिरिक्त आकाश तत्व भी होता हैं, अतः मानव पांच तत्व सम्पन्न प्राणी है। हमारे न्याय विधान में मानव की हत्या का दण्ड मौत है, पशु की हत्या का दण्ड मात्र जुर्माना

है, कीड़े-मकोड़ों की हत्या पर कोई नहीं पूछता। शाक-सब्जी, फल, कीमत देकर जितना चाहो खरीद लो। जीवन निर्वाह के लिए हत्या अनिवार्य है। सांस लेने तक में कई जीवों की, जिन्हें हम देख नहीं पाते, हत्या हो जाती है। तो फिर कम से कम पाप करें, शाक-सब्जी-फल-अनाज पर निर्वाह करें, जिसमें केवल एक तत्व, जल, प्रवल है, अन्य सुप्त हैं।

इसी तरह संत शराव आदि मादक द्रव्यों के सेवन की मनाही करते हैं, क्योंकि मादक द्रव्यों के सेवन से चेतनता का ह्रास होता है और अध्यात्म में हमें चेतनता का विकास करना है। मादक द्रव्यों के प्रयोग से हम अपने परम लक्ष्य (अपने आपको जानना और प्रभु को पाना) को प्राप्त नहीं कर सकते। मादक द्रव्यों का प्रयोग इस लक्ष्य की प्राप्ति में वाधक है। इसलिए संत इन द्रव्यों के प्रयोग की मनाही करते हैं।

हम आज मानव इतिहास के एक घोर संकट काल से गुजर रहे हैं जव नैतिक मूल्यों के संरक्षण की वड़ी आवश्यकता है। जैसा कि महान अमरीकी विचारक, डाक्टर मार्टिन लूथर किंग ने कहा : "We have guided missiles and misguided men." कि हमारी वैज्ञानिक शक्ति हमारी नैतिक शक्ति से वहुत आगे निकल गई है। इस वक्त हमारी स्थिति यह है कि हमारे पास नियंत्रित प्रक्षेपास्त्र हैं जो इन्सान के वताए पथ पर चलते हैं, लेकिन खुद इन्सान भटका हुआ है।

हमने विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में जो उन्नति की है, उसने हमें सर्वनाश के कगार पर ला खड़ा किया है। अगर इन्सान को ज़िंदा रहना है और हमारे इस अचरज भूमण्डल और इस पर रहने वाली विलक्षण और रंगारंग सृष्टि को भी वने रहना है, तो हमें नैतिकता का विकास करना होगा, नैतिक मूल्यों को ऊंचा उठाना होगा। स्वयं विज्ञान और तकनीकी की उन्नति इस तथ्य को हमारे सामने ला रही है। पिछले दिनों जव मैं अमरीका में एक अन्तरिक्ष यात्री, श्री मिचल रे, जो चांद पर यात्रा करने वाले छटे वैज्ञानिक हैं, मिला, तो उन्होंने मुझसे वाह्य अन्तरिक्ष यात्रा की वात की और मैंने उन्हें अन्तरीय अन्तरिक्ष की यात्रा के वारे में वताया। इन दोनों यात्राओं में वड़ी

समानता है, जैसा कि मैंने आपको बताया, इनका आपस में निकट सम्बन्ध है। श्री मिचल ने मुझे बताया कि जब उन्होंने इस धरा को छोड़ अन्तरिक्ष में उड़ान भरी तो वो मात्र एक वैज्ञानिक थे और उनका दिल-दिमाग अन्तरिक्ष यात्रा की कठिनाइयों तथा विविध समस्याओं को सुलझाने की ओर लगा था। लेकिन चांद पर पहुंचने का लक्ष्य पूरा करने के पश्चात जब वो वापस धरती की ओर लौट रहे थे तो उनके दिल-दिमाग पर कोई बोझ या तनाव नहीं था और वो नील गगन में फैले अन्तरिक्षीय मण्डलों को विस्मय भरे नेत्रों से देख रहे थे। "एक अचरज दृश्य मेरे चारों ओर फैला हुआ था। उस अनुपम दृश्य को देख कर, उन विलक्षण मण्डलों और उनमें विचरने वाली विविध जीव सृष्टि के प्रति अथाह प्रेम मेरे मन में उमड़ आया। धरती से गगन में उड़ान करते समय मैं एक वैज्ञानिक था। वहां से वापस आया तो एक रहस्यवादी बन चुका था।"

श्री मिचल ने बताया कि अन्तरिक्ष यात्रा के उपरोक्त अनुभव उन्हीं तक सीमित नहीं, जितने भी अन्तरिक्ष यात्री—वो रूस के थे या अमरीका के—इस धरा के गुरुत्वाकर्षण का घेरा तोड़ कर ऊपर उठे, वहाँ नील गगन की विलक्षण रचना को देख कर उन सब पर—किसी पर कम किसी पर ज्यादा—यही प्रभाव पड़ा। नीचे, धरती पर खड़े होकर, ऊपर तारों भरे आसमान पर नज़र जाती थी तो रात के अन्धेरे में टिमाटिमाते तारों को छटा दिल को लुभाती थी। जब वहां पहुंचे तो ये बृहदाकार भूमण्डल हमारा स्वयं एक छोटा सा तारा सा हमें दिखाई दिया। अनन्त आकाश जिसका ओर न छोर। उसमें अपना अपना गुरुत्वाकर्षण और प्रभामण्डल लिए आकाश में स्थित अनेकों मण्डल, हमारे इस भूमण्डल से भी बड़े। ये सब देख कर एक नयी गगनमुखी चेतना अन्तरिक्ष यात्रियों के मन में जाग उठी। इन्सान, जो विज्ञान के अविष्कारों के प्रताप से समुन्दरों और पहाड़ों की दूरियों को पाट कर अन्तर्राष्ट्रीय चेतना के द्वार पर पहुंच चुका था, कुछ और आगे बढ़ा, कुछ और ऊपर उठा और Inter Planetary (अन्तर मण्डलीय) चेतना में जाग उठा। उसका अहम् और विस्तृत हुआ और उसके साथ एक उदात्त, उन्मुक्त प्रेम का संचार उसके तन-मन में हुआ जो किसी दायरे में कैद नहीं, जो देश-काल,

समय-स्थिति-स्थान से बन्धा हुआ नहीं।

यदि बाह्य अन्तरिक्ष की यात्रा मानव के चिन्तन में इतना बड़ा परिवर्तन ला सकती है, उसके भावना-स्तर को इतना ऊंचा उठा सकती है कि वो सारे तंग दायरों और मोह-बन्धनों से ऊपर उठ कर सृष्टि को अपने अंक में समेटने के लिए तैयार हो जाए, तो अन्तर के विराट अन्तरिक्ष की यात्रा मानव के चिन्तन और कृतित्व को कहां पहुंचा देगी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस संदर्भ में ये बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि विश्व बन्धुत्व और प्रेम के सब से बड़े प्रचारक सन्त-महात्मा ही थे, जिन्होंने अपने अन्तर में प्रवेश करके अन्तरीय अन्तरिक्ष की चढ़ाई की। उन्होंने बताया कि एक परम पिता परमात्मा की सन्तान होने के नाते हमारा, हर इंसान का, आपस में भाई-भाई और बहन भाई का कुदरती, जन्मजात, संबंध है। हम सभी, प्रेम के रिश्ते में बंधे हुए हैं। उनके मतानुसार प्रेम सिद्धांत-वाद की चीज नहीं, वो हमारे अस्तित्व का अभिन्न अंग है। और प्रेम देना जानता है, लेना नहीं, निष्काम सेवा और त्याग करना जानता है। जिसके हृदय में प्रेम है वो दूसरों के लिए जान तक कुर्बान कर देता है। बाईबल में कथन आता है :

> "प्यार का चरम ये है कि इंसान अपने मित्रों के लिए अपनी जान न्योछावर कर दे।"

अध्यात्म का इतिहास उन शहीदों की अमर गाथाओं से भरा पड़ा है जिन्होंने मानव जाति के प्यार के वशीभूत हंसते-हंसते जानें कुर्बान कर दीं। हम आप जैसे बाहर की आचार मर्यादा का पालन करने वाले लोगों के लिए समस्त जीव सृष्टि की एकता का ख्याल मात्र एक स्थापना, एक सिद्धांत है। लेकिन अगर हमारी अन्तर की आंख खुल जाए तो हमारा दृष्टिकोण बदल जाएगा। अगर हमारा भाग्य उदय हो और किसी पूर्ण समर्थ सतगुरू के चरणों में जाना नसीब हो जाए, वो हमारे हाल पर दया कर के हमें नाम (गुरू मंत्र या दीक्षा) दे दे, अपनी तवज्जो (दयादृष्टि) का उभार देकर फैली हुई हमारी सुरति को अंतर्मुख करे, हमारी अंतर की आंख को खोले, जिस से हम अपने अंतर में उस ज्योति स्वरूप परमात्मा की ज्योति को देखने वाले हो जाएं और हमारे अंतर के कानों पर लगी मोहरों को तोड़ दे, जिससे

हम उस प्रभु की वाणी('वाणी वज्जी चौजुगी सच्चो-सच सुणाए' गुरुवाणी) को सुनने वाले हो जाएं तो हम अपने जीवनाधार प्रभु की ज्योति का दर्शन अपने अन्तर में कर सकेंगे और उसके वाद वाहर कण-कण में और जन-जन में उस प्रभु का नूर हमें नज़र आएगा। हम अनुभव करेंगे कि एक ही जीवनधारा हमारी जीवन-प्राण है, हमारी करता-धरता-प्रतिपालक और जीवनाधार है। इस अनुभव को पाने के वाद ही हम अपने पड़ौसी को तथा अपने साथी इन्सानों को अपना भाई और सहोदर समझेंगे और सन्तों की नम्रता हमारे अन्तर में पैदा होगी, क्योंकि जिसे अंतर घट में प्रवेश करने का रास्ता मिल चुका है और जो स्वेच्छा से पिण्ड (स्थूल शरीर) से ऊपर दिव्य मण्डलों में चढ़ाई कर सकता है। उसकी दृष्टि में छोटे से छोटा और बड़े से वड़ा प्राणी समान हैं, क्योंकि दोनों के घट में वो प्रभु निवास करता है।

राबिया वसरी, मुसलमानों में एक वहुत वड़ी सूफ़ी फ़कीर हो गुज़री है। उसके जीवन में एक वृत्तान्त आता है कि वो एक वार क़ाफ़िले के साथ हज के लिए काअबा जा रही थी। काअबा अरव के तपते रेगिस्तान के वीच मुसलमानों का सब से पवित्र तीर्थ है। आज जब रेल और वायु-यान के यातायात के साधन उपलब्ध हैं, हज की यात्रा इतनी कठिन नहीं है, लेकिन पुराने ज़माने में हज का सफ़र आसान नहीं था। मीलों लंबे रेगिस्तान में जलती हुई रेत, आँखों में जलन और चुभन पैदा करती हुई। कहीं कोई हरियावल, कोई छाया नहीं, पानी का निशान नहीं। भट्टी की तरह तपते विशाल मरुस्थल में सब से कीमती चीज़, पानी, साथ ले कर चलना पड़ता है। तिस पर लुटेरों के हमले का खतरा, जिससे बचने के लिए हज के यात्री क़ाफ़िले वना कर चलते है। मीलों लंबे सफ़र के वाद कोई कुआं और उसके आस-पास खजूर के चन्द पेड़, जिसे अरब वाले 'नखलिस्तान' कहते हैं, मिल जाए तो मिल जाए, अन्यथा ऊंटों का क़ाफ़िला जहां थक जाए, वहां तम्बू गाड़ कर पड़ाव कर लिया और आगे चले पड़े। फिर वही ऊपर से बरसती आग और नीचे तपती रेत पर जान-लेवा सफ़र का सिलसिला !

राबिया एक क़ाफ़िले के साथ हज के लिए काअवा जा रही थी।

चलते चलते रास्ते में गरमी से निढाल एक कुत्ता उसे दिखाई दिया जो बुरी तरह हांप रहा था। प्यास के मारे उसकी ज़बान बाहर लटक गई थी। क़ाफ़िले वालों ने देखा मगर तवज्जो न दी। राबिया ने देखा और उसके कदम वहीं रुक गए। क़ाफ़िला आगे निकल गया। वो पानी की तलाश करने लगी। बहुत दूर जाकर एक कुआँ मिला, लेकिन वहाँ पानी निकालने के लिए रस्सी थी न बर्तन। कहते हैं उस ने एक एक कर के सारे कपड़े उतार डाले और उन्हें जोड़ कर एक रस्सी बनाई। वो रस्सी भी छोटी पड़ गयी, पानी तक न पहुंच सकी। उसने अपने बाल काट डाले और उन्हें मरोड़ कर एक और रस्सी बनाई और उसे कपड़ों की रस्सी के साथ बांध दिया। रस्सी अब काफ़ी लंबी हो गयी और उसका कपड़ों वाला सिरा पानी तक पहुंच गया। राबिया ने भीगा कपड़ा निचोड़ कर मरते हुए कुत्ते के मुंह में पानी डाला। कुत्ते में जैसे जान पड़ गई। वो ताज़ादम होकर उठ बैठा और उछलने-कूदने लगा। राबिया ने आंख उठाकर देखा तो क़ाफ़िले का कहीं कोई निशान दिखाई न दिया।

भरे बयाबान में वो अब अकेली थी। क़ाफ़िला दूर निकल गया था। हज की नीयत बाँध कर घर से निकली थी मगर अब वो मुराद पूरी होती दिखाई नहीं देती थी। तभी उसे बशारत (आकाशवाणी) हुई, 'राबिया बसरी, तेरा हज हमने कबूल (स्वीकार) किया।'' वो, जो सब देखता है, सब जानता है, उसने उसका हज स्वीकार कर लिया था।

हम बातें तो बहुत करते हैं—विश्व प्रेम की, इन्सानी भाईचारे की। हम सिद्धांत रूप में ये मानते हैं कि हम एक पिता, परमात्मा, की सन्तान हैं, जो सबका कर्ता, प्रतिपालक और जीवनाधार है। गुरुबाणी के अनुसार—'एक पिता एकस के हम बारक।' आपस में हमारा, हर इन्सान का, भाई-भाई और बहन भाई का नाता है। हमारी इस मान्यता का आधार क्या है? चिंतन-मनन-अध्ययन? बुद्धि विचार? पढ़ा-सुना, बुद्धि-विचार द्वारा उसका मन्थन किया, बात जची तो उसे मान लिया। एक बात को मात्र समझा है, देखा तो नहीं? जाना तो नहीं? मात्र-बुद्धि में बात उतरी है, जीवन में नहीं। विश्व प्रेम और इंसानी भाईचारे की बात हम केवल बुद्धि के स्तर पर करते हैं। ये समझने-समझाने का नहीं, देखने-दिखाने का

मज़मून है। जब हम पिण्ड से ऊपर उठकर अपने निज स्वरूप (अर्थात आत्म स्वरूप) को देखते हैं, अपने जीवनाधार, परमात्मा, की ज्योति का दर्शन करते हैं तो हर फूल, हर पत्ती में, हर इन्सान में, पशु-पक्षी में, कीड़े-मकोड़े में उस प्रभु की ज्योति हमें दिखाई देती है। जन-जन में और कण-कण में उसका नूर हम देखते हैं। जब तक ये अवस्था हमारी न बने, विश्व प्रेम और इंसानी भाईचारे की भावना हमारे जीवन-आचरण में नहीं उतर सकती। हमारे हज़ूर (श्री हज़ूर बाबा सावनसिंह जी महाराज) के शब्दों में, "लोग पढ़न ते ज़ोर देंदे ने चढ़न ते नहीं।' अर्थात लोग ग्रन्थों-पोथियों के अध्ययन तथा बुद्धि-विचार द्वारा परमार्थ को पाना चाहते हैं, जब कि ये अन्तर में चढ़ाई (अन्तरीय गगन मण्डल की चढ़ाई) का विषय है।

अगर राबिया बसरी की तरह हम प्राणीमात्र से प्रेम करना सीख जाएं तो हमारे लिए सभी अपने हों, कोई पराया न हो, कोई बैरी न हो, शक-शुबहे की, नफ़रत की, हिन्सा और युद्ध की, कोई गुन्जायश न रहे। एक प्रभु परिवार के नाते सब आपस में प्रेम-प्यार से रहें। बाह्य अन्तरिक्ष की यात्रा के साथ हम अपने छोटे से दायरे से निकल कर भूमण्डलीय बन गए हैं। अब एक कदम आगे बढ़कर हमें अन्त-रिक्षीय मानव बनना है, ताकि परमात्मा की बादशाहत (अर्थात राम राज्य) हम इस धरती पर ला सकें। सन्त महात्मा जो जीवों के कल्याण हेतु इस धरा पर आए, यही आदर्श हमारे सामने पेश करते चले आ रहे हैं। वो यही कहते रहे, "हम शरीर नहीं, आत्मा हैं, इस शरीर के जीवन-प्राण, इसे चलाने वाले। यह सारी धरती प्रभु का घर है। इसका न कोई उत्तर दक्षिण है, न पूर्व-पश्चिम। हम एक पिता (परमात्मा) की सन्तान हैं, एक परिवार के सदस्य हैं। सारी दुनिया हमारा घर है। हम न पूर्वी हैं, न पश्चिमी, हम सारी दुनिया के हैं और ये सारी दुनिया हमारी है।' हमारे कहे पर न जाओ, तुम अपने अन्तर में प्रवेश करो, अन्तरीय अन्तरिक्ष में चढ़ाई करो, अर्थात देहा-भास से ऊपर उठकर देखो और अनुभव करो कि तुम आत्मा हो, देह-धारी, इस देह के निवासी, इसके चलाने वाले। और आत्मा महा-चेतन परमात्मा की अंश है। ये भी चेतन स्वरूप है। परमात्मा प्रेम का महासागर है। आत्मा उस महासागर की लहर है। ये भी प्रेम

है। और प्रभु के धाम वापस जाने का रास्ता भी प्रेम है।"

जब मैं पिछली बार अमरीका गया तो हन्टर कालिज न्यू यार्क में मेरा प्रवचन हुआ। वहां प्रबन्धकों की ओर से जो सज्जन श्रोताओं से मेरा परिचय करा रहे थे, वो कहने लगे, "आपने यहाँ, हमारे देश में आकर, हम पर बड़ा उपकार किया है। हम आपके आभारी हैं।" मैंने जवाब में उनसे कहा, "यद्यपि मैं अपनी जन्म भूमि (भारत) से हजारों मील का लंबा सफ़र तय करके यहाँ आया हूं लेकिन यहां आकर मैं ये महसूस करता हूं कि मैं अपने घर में, अपने बहन-भाइयों के बीच खड़ा हूं।" और मैंने ये दो शेअर उन्हें पेश किए :

नाम है आदमी तो क्या अस्ल में रूहे-इश्क़ हूं।
सारी ज़मीं है मेरा घर, सारा जहाँ मिरा वतन॥

और,—

गले लगा लो हर इन्सान को कि अपना है।
चलो तो राहगुज़ारों में बाँटते हुए प्यार॥

परम संत श्री हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज (1858-1948) जिला लुधियाना (पंजाब) के गांव महिमासिंह वाला, में एक समृद्ध जाट घराने में पैदा हुए। उन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में अध्यात्म की शिक्षा-दीक्षा के इतिहास में एक नया उज्ज्वल अध्याय जोड़ा। उन्होंने खुले हाथों परमार्थ की अनमोल निधि दुनिया में बांटी, बल्कि मुफ्त लुटाई कि दसों दिशाओं को नूर से भरपूर कर दिया, जो भी उनके चरणों में आया, वो कोई हो, कहीं का हो, किसी भी देश जाति-धर्म-समाज का हो, उसको आत्मानुभव से मालामाल कर दिया। अपने जीवन काल में उन्होंने लगभग संवा लाख जीवों को नाम दान दिया। उनके जमाने में पहली बार सुरति-शब्द योग का प्रचार-प्रसार पश्चिम में शुरू हुआ। उन्होंने भविष्यवाणी की थी कि निकट भविष्य में रूहानियत बड़ी तेजी से पश्चिम में फैलेगी। उनकी ये भविष्यवाणी उनके आध्यात्मिक उत्तराधिकारी हजूरे-पुरनूर संत कृपाल सिंह जी महाराज (1894-1974) और उनके बाद आज संत दर्शन सिंह जी महाराज द्वारा पूरी हो रही है।

हजूरे-पुरनूर संत कृपाल सिंह जी महाराज (1894-1974) जिला रावलपिंडी के गांव सैयद कसरां में (जो अब पाकिस्तान का हिस्सा है) एक संभ्रान्त खत्री घराने में पैदा हुए। अपने महाप्रतापी सतगुरू हजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज की तरह उन्होंने आत्मविद्या को एक सुनिश्चित, प्रयोग-सिद्ध साईन्स के रूप में पेश किया और बिना किसी भेद-भाव के, हरेक परमार्थीभलाषी को जो उनके पास आया, नामदान देकर आत्मानुभव की दौलत से मालामाल कर दिया। उन्होंने तीन विश्व यात्राएं कीं और अपने गुरू की रूहानियत की दात खुले हाथों लुटाई। अपनी 26 वर्ष की पल-पल कार्यरत, व्यस्त अति-व्यस्त रूहानी पादशाही में उन्होंने परमार्थ के विविध विषयों पर अनेकों किताबें लिखीं जिनमें से कई विश्व की 19 भाषाओं में अनुवादित हो चुकी हैं। विश्व धर्म सम्मेलन के अंतर्गत (जिसके चार सम्मेलन उनकी अध्यक्षता में हुए) उन्होंने विभिन्न धर्मों और मजहबों के मानने वालों को एक मंच पर इकट्ठा किया और इसके बाद 1974 में अपने अंतिम जन्मोत्सव पर विश्व मानव एकता सम्मेलन का महान क्रांतिकारी कदम उठाया जिसमें खुले आम घोषणा की, "मैं सतयुग की नव प्रभात की किरणें आसमानों से उतरते देख रहा हूं।"

कोलंबिया राष्ट्र की राजधानी 'बोगोटा' नेशनल कांग्रेस (पारलियामेंट) विशाल भवन के बाहर जहां 9 सितंबर 1983 को संत दर्शन सिंह जी महाराज को कोलंबिया पारलियामेंट की ओर से कोलंबिया राष्ट्र का पदक भेट किया गया।

...हमारे अंतर की दुनिया बड़ी विशाल और समृद्ध है। यही दुनिया है जो इंसान को सच्चा इंसान बनाती है। बाह्य जगत अंतर की दुनिया की मात्र एक छाया है। आप बड़ी ऊंची शिक्षायें हमारे लिये छोड़े जा रहे हैं। प्रभु करे कि अपनी महान कविता और आध्यात्मिक संदेश द्वारा नवचेतना के जो बीज आपने हमारी इस धरती पर डाले हैं, वह समय पाकर फलीभूत हों और हमारे जीवन को समृद्ध करें।''

—डाक्टर कार्लोस हार्लगिन सार्डी
कोलंबिया पार्लियामेंट के अध्यक्ष